वर्ष : 22 अंक : 1 (76वाँ अंक) जनवरी-मार्च, 2017

विचार

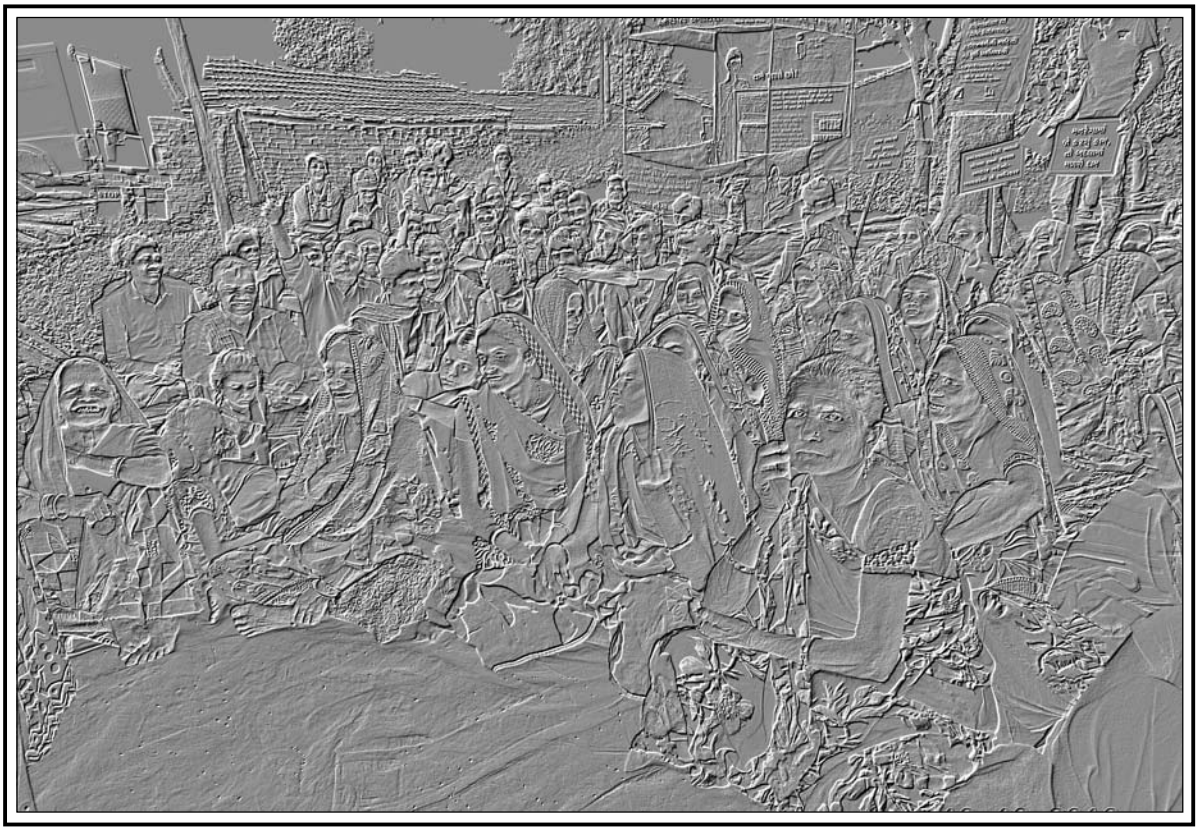

सक्षमता का रास्ता - संगठित होना

यूरोपीय संघ

उन्नति
UNNATI

■ **संपादकीय**	**3**
■ गरीब महिलाओं के लिए सूक्ष्म बीमा उत्पादों और सेवाओं का विकासः स्वाश्रयी महिला संघ, सेवा के 'वीमो सेवा' बीमा सहकारिता के अनुभव	**5**
■ सामाजिक न्याय की अवधारणा (ग्रासरूट कार्यकर्ताओं के उपयोग के लिए)	**9**
■ आपदा प्रबंधनः संगठनात्मक भागीदारी एवं हितधारकों के समन्वय में तेजी लाने की आवश्यकता	**13**
■ विकलांग व्यक्ति अधिकार अधिनियम, 2016 - मुख्य विशेषताएं	**15**
■ राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति - 2017 - आम जनता के लिए स्वास्थ्य सेवा का नया अवसर	**17**
■ लोगों को संगठित करने और एकत्रित करने में अन्तर	**20**
■ सुनने की क्रिया - 'एक परिप्रेक्ष्य'	**24**
■ अधिकार प्राप्ति की मंत्रणा के लिए सामाजिक समझौता - जातिगत ढांचे के अंतर्गत बदलते पहलूओ	**25**
गतिविधियाँ	**30**

संपादकीय

सक्षमता का रास्ता - संगठित होना

गरीब सत्ताहीन होने के कारण खुद को असहाय महसूस करते हैं और सदा अपने जीवन को लेकर भयभीत रहते हैं। उनके जीवन को ऐसी ही शक्तियां नियंत्रित करती हैं, जिन पर उनका कोई वश नहीं। इस परिस्थिति को बदलने की शक्ति 'सक्षमता' में ही है। लोग गरीब हैं क्योंकि, पहला - उनका संसाधनों पर कोई नियत्रंण नही है। जैसे जमीन, जल, जंगल, खनिज, मशीनें इत्यादि। दूसरा - गरीब लोग उन जातियों और समुदायों से हैं, जो कि परंपरागत रूप से राजनैतिक और सामाजिक रूप से पिछड़े हैं। गरीब महिलाओं की स्थिति और भी खराब है। असक्षमता किसी एक क्षेत्र तक सीमित नहीं है। किसी एक क्षेत्र में असहाय होने से वह व्यक्ति अन्य क्षेत्रों में भी अक्षम ही रहेगा। व्यक्ति आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक रूप से असहाय हो सकता है।

सामाजिक क्षेत्र में स्वास्थ्य, शिक्षण, जल व स्वच्छता, आवास और अन्य शामिल हैं। ज्यादातर लोग इन आवश्यकताओं की पूर्ति निजी क्षेत्र की सेवाओं से करते हैं, जबकि इसका उत्तरदायित्तव सरकार का है। सरकारी क्षेत्र की व्यवस्था तक गरीब आसानी से नहीं पहुँच पाते हैं। जो लोग आर्थिक और सामाजिक रूप से सक्षम हैं, उनके लिए राजनैतिक सक्षमता भी सहज से हो जाती है। सक्षमता हासिल करने के लिए संगठन बनाना मूलमंत्र है। संगठन बनाना, एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से निर्बल लोग एकजुट होकर मिलजुल कर शक्तिवान होते है। एकजुट होने से उन्हें अपने अधिकारों के बारे में ज्ञान मिलता है। वे कई प्रकार की जानकारियां हासिल करते हैं, जिससे उनमें आत्मविश्वास पनपता है कि वो भी अपने और परिवार की स्थिति सुधारने की योग्यता रखते हैं। संगठन बनाने से व्यक्ति के सोचने, देखने और अनुभव करने का तरीका ही बदल जाता है। उनकी भौतिक स्थिति में भी बदलाव आने लगता है। कम पूंजी वाले उत्पादक मिल-जुल कर थोक भावों में कच्चा माल खरीद सकते है। वे किसान जो अकेले बाजार में प्रवेश करने में असमर्थ महसूस करते हैं, सामूहिक रूप से बाजार में अपना स्थान बना लेते हैं। गरीब महिलाएं अपनी छोटी-छोटी बचत से स्थानीय बचत बैंक बना सकती हैं। भूमिहीन मजदूर जमीन पर सामूहिक मालिकाना हक प्राप्त कर सकते हैं। किसी गांव में महिलाएं समूह में संगठित होकर स्कूल चला सकती हैं या आंगनवाडी या स्वास्थ्य केन्द्र खोल सकती हैं। संगठन बनाने से शक्ति बढ़ती है और उनकी आवाज सुनी जाने लगती है। यही बढ़ती शक्ति संगठनों का आधार है। संगठन के जरिये अपनी अवाज बुलंद की जा सकती है। नीतियां बदली जा सकती हैं। नये कानून बनाये जा सकते हैं और नीति-निर्धारण के क्षेत्र में अपना प्रतिनिधित्व कर सकते हैं।

गरीबों को संगठित करने के लिए दो महत्त्वपूर्ण पहलू हैं - पहला, किसी विशेष मुद्दे पर संघर्ष करना, जो गरीब के हित में हो। संगठन का दूसरा मुद्दा कार्यक्रम आधारित है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि संगठन बनाने का प्रयास लंबे समय तक जारी रहेगा। टिकाऊ संगठन बनाने के लिए आवश्यक है कि वह उन लोगों द्वारा नियंत्रित हो, जो इस संगठन की सेवाएं लेते हैं। छोटे संगठन का संचालन, प्रबंधन और नियत्रंण लोगों द्वारा होता है। बड़े संगठनों में कुशल व्यक्तियों की सेवाएं ली जा सकती हैं। लोक संगठन का स्वरूप लोकतांत्रिक होना चाहिए।

लोक-संगठन का सबसे छोटा आकार ग्राम या इससे भी छोटे स्तर का होता है। लोक संगठन की सब से छोटी इकाई स्वयं सहायता समूह होते है। ये जिला राज्य और राष्ट्रीय स्तर तक भी जाने चाहिए। अपने सदस्यों को अधिक से अधिक लाभ पहुंचाने के लिए देश की मुख्यधारा की संस्थाओं से जुडना भी जरूरी है। जैसे स्वैच्छिक संस्थाएं, लोक संगठन का स्थान नही ले सकती, क्योंकि पहला ये संस्थाएं देश में सर्वत्र समान रूप से नही फैली हैं। दूसरा स्वैच्छिक संस्थाओं के उभरने के लिए ऐसे लोगों की आवश्यकता होती है, जो सेवा भावना से परिपूर्ण हों और त्याग करने की क्षमता रखते हों। तीसरा लोगों में सक्षमता तभी आ सकती है, जब वे संगठन को सही अर्थों में खुद ही संचालित करते हों।

नीति निर्धारक अधिकतर यह महसूस करते हैं कि पंचायती राज और लोक संगठन एक ही बात है तथा पंचायतों तथा अन्य पंचायती राज संस्थाओं को ही विकास के सभी कार्यक्रम संचालित करने का दायित्त्व संभालना चाहिए। पंचायती राज संस्थाएं राजनैतिक संस्थाएं हैं, जिनका कार्यक्रम विकासोन्मुखी है और उन्हें विकास में सहायता और सहयोग देना चाहिए। इसका यह अर्थ नहीं कि स्वयं पंचायत को ही संगठन चलाना चाहिए। राजनैतिक और विकास के संगठनों को चलाने में जो अंतर है, इस समझ के अभाव में नीति निर्धारक मानने लगते हैं कि गांव में कोई भी सहकारी समीति स्थापित करने की जरूरत नहीं हैं, क्योंकि सहकारी समीतियों का संचालन निर्वाचित पंचायत ही करेगी। इन दोनों संस्थाओं के कार्य भिन्न हैं लेकिन आपस में निकट संबध होना बेहद जरूरी है।

सक्षमता लोक-संगठनों को संगठित करने से ही प्राप्त होती है। लोक संगठनों को आगे बढ़ाने और गरीबो को उत्साहित करने के लिए जिन नीतियों की आवश्यकता है, उसके कुछ तरीके रेनाना झाबवाला (सेवा) द्वारा सुझाए गए हैः

- गरीब कल्याण कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए आर्थिक मुद्दों को लेकर संगठन बनाना सर्वाधिक प्रभावी रहता है। आर्थिक मुद्दे जैसे कि रोजगार, सुरक्षा, आमदनी बढ़ोत्तरी इत्यादि गरीबों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाती है।
- निजीकरण और जवाबदेही को लोक-संगठनों की ओर उन्मुख किया जाना चाहिए। सहकारी संसाधनों का निजीकरण स्थानीय लोक-संगठनो के हित में होना चाहिए। अगर किसी तालाब का निजीकरण स्थानीय मछुआरों के लिए किया जाए, किसी जंगल का निजीकरण स्थानीय जंगलवासियों के लिए किया जाये तो इससे लोक-शक्ति बढ़ेगी। सरकारी सेवाओं जैसे राशन की दुकान, स्वास्थ्य केन्द्र, शिक्षा आदि को गरीबों के प्रति जवाबदेही बनाया जाये।
- महिलाओं को विकास कार्य में नेतृत्व का मौका मिलना चाहिए। महिलाएं ऐसे मुद्दों को सामने लाती हैं जो दैनिक विकास से जुड़े हैं। लोक-संगठन का नेतृत्व जहाँ तक सम्भव हो, महिलाओं के हाथ में होना चाहिए।
- स्वैच्छिक संस्थाएं, सरकार, विश्व विद्यालयों, प्रशिक्षण स्कूल को लोक संगठनों की क्षमता वृद्धि और सहयोग का काम अपने हाथ में लेना चाहिए।
- लोक-संगठनों में विश्वसनीयता लाने के लिए ऐसी नीतियां बनानी चाहिए, जो उनके हित में हो। ■

गरीब महिलाओं के लिए सूक्ष्म बीमा उत्पादों और सेवाओं का विकासः स्वाश्रयी महिला संघ, सेवा के 'वीमो सेवा' बीमा सहकारिता के अनुभव

- मिराई चटर्जी
अध्यक्ष, राष्ट्रीय बीमा 'वीमो-सेवा' सहकारिता,
निदेशक, सेवा सामाजिक सुरक्षा
प्रिन्स माहिडोल पुरस्कार अधिवेशन, 2016 में दिए गए वक्तव्य के मुख्य अंश
29 जनवरी 2016 बैंकाक, थाईलैंड

देश का अधिकांश - 93 प्रतिशत श्रमिक गरीब वर्ग असंगठित अर्थव्यवस्था के साथ जुड़ा हुआ है। अधिकांश असंगठित श्रमिकों के नियोक्ता-कर्मचारी संबंध स्थाई नहीं होते। इसके अलावा, कई लोग स्वरोजगार कर रहे हैं, वे हॉकर, कारीगर जैसे अन्य छोटे-बड़े काम करते हैं। खेती आज भी अधिकांश भारतीयों के लिए आजीविका का प्रमुख स्रोत है। इनमें अधिकांश लोग स्वरोजगार के साथ जुड़े, छोटे और सीमांत किसान हैं। असंगठित मजदूरों की विशेषता यह है कि उनके पास कम या नगण्य रोजगार होता है और आय की सुरक्षा लगभग नहीं के बराबर होती है। वे स्वास्थ्य देखभाल, बच्चे की देखभाल, बुनियादी सुविधाओं के साथ आवास, बीमा और पेंशन जैसी बुनियादी सामाजिक सुरक्षा से भी वंचित होते हैं। इतना ही नहीं, इनमें से कई श्रमिकों के लिए खाद्य सुरक्षा की समस्या अभी भी बरकरार है। भारत के असंगठित और गरीब मजदूरों में महिलाओं का अनुपात अधिक है। महिलाएं काफी हद तक तंबाकू उगाने और उसकी प्रोसेसिंग जैसे खतरनाक कार्यों के साथ जुड़ी होती हैं और उन्हें मजदूरी का बहुत कम भुगतान मिलता है। अन्य देशों की तरह भारत में भी असंगठित क्षेत्र, गरीबी और स्त्री-पुरुष समानता (जेन्डर) के पहलू परस्पर जुड़े हुए हैं।

'स्वाश्रयी महिला संघ - 'सेवा' असंगठित क्षेत्र की महिला मजदूरों का राष्ट्रीय संगठन है। मैं संगठन के साथ जुड़ी हुई हूँ। लगभग चार दशक पहले इला भट्ट ने 'सेवा' की स्थापना की थी। इला भट्ट, एक वकील और श्रमिक (मजदूर) संगठक है। असंगठित महिला मजदूरों को दो वक्त की रोटी कमाने में आने वाली कठिनाइयों पर ध्यान देकर इलाबेन ने इस क्षेत्र में काम करने का निर्णय लिया। कुछेक फेरीवालों के साथ शुरू की गई 'सेवा' आज करीब बीस लाख सदस्यों वाला विशाल संगठन बन गया है। इसके साथ ही 'सेवा' अफ्रीका और एशिया में विभिन्न संगठनों को भी प्रोत्साहित करती है। घर से काम करने वाले श्रमिकों के कल्याण के लिए काम करने वाली होमनेट थाईलैंड ऐसा ही एक साथी संगठन है। देश की आजादी में अमूल्य योगदान देने वाले महात्मा गांधी से 'सेवा' को प्रेरणा मिली है। गांधीजी ने जिसे दूसरी आजादी कहा था - उस 'भूख और गरीबी से मुक्ति' के लिए सेवा लड़ाई जारी रखने के लिए प्रतिबद्ध है। गांधीजी ने आह्वान किया था कि पहली आजादी मिलने के बाद सभी भारतीयों को उक्त दूसरी आजादी हासिल करने के लिए आगे बढ़ना चाहिए। कई साल बीतने के बाद हम समझ सके हैं कि गरीब लोग संगठित हो, उनमें एकता की भावना पैदा हो और उनके सदस्यता आधारित संगठनों का विकास हो (जिसके वे उपयोगकर्ता, व्यवस्थापक और मालिक हों), तभी दूसरी आजादी मिल सकती है। इन सामूहिक संगठनों के माध्यम से ही गरीब अपने दैनिक जीवन में सहन कर रहे शोषण और अन्याय का विरोध कर सकेंगे। महिला श्रमिकों को घर में, अपने समुदाय में और साथ ही समाज में हर स्तर पर जेंडर भेदभाव सहन करना पड़ता है, इसीलिए उनके लिए ये संगठन बहुत जरूरी हैं।

हम समझ सके हैं कि 'सेवा' की हमारी बहनों की तरह गरीब महिलाएं घर पर ही पूर्ण रोजगार प्राप्त करके गरीबी के चक्र से बाहर निकल कर आत्म-निर्भरता की ओर आगे बढ़ सकती हैं। पूर्ण रोजगार में काम और आय की सुरक्षा, खाद्य सुरक्षा और सामाजिक सुरक्षा भी शामिल है। सामाजिक सुरक्षा में पहले उल्लेखित बुनियादी सुविधाओं और सेवाओं को शामिल किया जाना चाहिए - जैसे स्वास्थ्य देखभाल, बच्चे की देखभाल, हर घर में नल और शौचालय के साथ आवास, बीमा और पेंशन। ये सभी सेवाएं और सुविधाएं तभी संभव हो पाएंगी, जब महिलाएं अपने स्वयं के संगठन बनाकर अपनी समस्याओं का रचनात्मक समाधान खोजने लगेंगी। 'सेवा' द्वारा सदस्यता-आधारित 5,000 से अधिक छोटे, मध्यम और बड़े संगठन स्थापित किये गये हैं। बोर्ड में लोकतांत्रिक ढंग से महिलाएं निर्वाचित होती है और वे समानता और समावेशी

आधार पर अपनी प्राथमिकताएं को तय करती हैं। महात्मा गांधी जानते थे कि देश की बहुत बड़ी आबादी गरीब है। अतः बेहद गरीब ओर सबसे जरूरतमंद और वंचित समुदायों को ध्यान में रखते हुए प्राथमिकताओं का निर्धारण करना आवश्यक है। गांधीजी ने कहा था, ''आपने जिस गरीब और कमजोर व्यक्ति के चेहरा देखा हो, उसे याद करो और स्वयं से प्रश्न करो कि आप जो कदम उठाने जा रहे हैं, उससे क्या उस व्यक्ति को कोई लाभ होगा? क्या आपके इस कदम से वह व्यक्ति अपने जीवन और अपने भाग्य पर नियंत्रण कर सकेगा?"

'सेवा' में हम गांधीजी के बताए मार्ग पर चलने की कोशिश करते हैं और भारतीय समाज के अत्यंत गरीब वर्ग - असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों पर ध्यान देते हैं। हमारी 'सेवा' की महिलाओं की प्राथमिकताओं और जरूरतों में वित्तीय सेवाएं शामिल हैं। शुरुआती दिनों से ही महिलाओं को समझाया गया कि अगर वे साहूकारों और ब्याजखोरों का सहारा लेती रहेंगी, तो वे गरीबी से बाहर नहीं निकल सकेंगी। इसके साथ ही उन्हें अपनी बचत के लिए एक सुरक्षित जगह मिले और फिर सस्ती वित्त पोषण सेवाएं मिलना जरूरी था। उनके अपने सहकारी बैंक 'सेवा बैंक' द्वारा उन्हें ये सेवाएं उपलब्ध करवाई गई, इसके बाद उन्होंने बीमा की जरूरत व्यक्त की है। कपड़े बेचने का व्यवसाय करने वाली कार्यकर्ता और संगठन की नेता आयशा के अनुसारः ''हम बहुत मेहनत करते हैं और हम बचत कर रहे हैं। लेकिन, घर में कोई बीमारी आए या परिवार के किसी सदस्य की मृत्यु हो जाए, तब हमारी सारी बचत उसी में खत्म हो जाती है और फिर या तो हमें साहूकार के पास जाना पड़ता है या गहने गिरवी रखने पड़ते हैं और कर्ज लेना पड़ता है। इन परिस्थितियों में, हम आत्मनिर्भर कैसे बन सकते हैं?" आयशा की सहकर्मी और पुराने कपड़े बेचकर जीवन निर्वाह करने वाली नानुबेन ने अपना व्यवसाय शुरू करने के लिए 'सेवा बैंक' से 27 बार लोन लिया है। नानुबेन का कहना हैः "मुझ जैसी महिलाओं को लोन लेने की जरूरत पड़ती है। हम हमारे अपने बैंक से सस्ता लोन ले सकते हैं। जब मेरे पति की मृत्यु हुई तब मैंने उनकी लौकिक क्रियाओं में मेरी सारी बचत खर्च कर दी। मैं लंबे समय तक लोन नहीं चुका सकी। मेरी जैसी महिलाओं के लिए बीमा होना आवश्यक है।"

आयशा और नानुबेन जैसी अन्य हजारों महिलाओं ने 'सेवा' के समक्ष बीमा आवश्यकता बतायी है। 70 के दशक के अंत में हमने कई राष्ट्रीयकृत बीमा कंपनियों से संपर्क किया था। इससे पहले, बैंकों ने 'इन महिलाओं की पर्याप्त आय नहीं' कहकर बीमा करने से इनकार कर दिया था। बैंको ने कहा कि 'ये महिलाएं बैड रिस्क हैं (अर्थात् उनका बीमा करने में जोखिम है)' और इसलिए बीमा कंपनियां उन्हें बीमा सुरक्षा कवर नहीं दे सकती। जब 1992 में सेवा के सदस्यों की संख्या 50,000 पहुंच गयी, तब बीमा कंपनियां महिलाओं का बीमा करने के लिए चर्चा करने पर सहमत हुई।

शुरूआत

बीमा कंपनियों ने इससे पहले असंगठित महिला श्रमिकों के साथ आमने-सामने बातचीत नहीं की थी। धीरे-धीरे इन कंपनियों की इन महिलाओं की जरूरतों, उनके सामर्थ्य और आवश्यक सेवा प्रदान करने के बारे में समझ बनती चली गई। महिलाओं ने बताया कि उन्हें जीवन बीमा और गैर-जीवन बीमा (स्वास्थ्य, दुर्घटना और संपत्ति का बीमा) दोनों प्रकार के बीमा कवर की जरूरत है। इस प्रकार, 1992 में सूक्ष्म बीमा के लिए लंबी यात्रा की शुरुआत हुई। 2009 तक, महिलाओं को अपने खुद की सहकारी समिति गठित करने के लिए आवश्यक सूक्ष्म बीमा का अनुभव हो गया था। इसलिए, 12,000 शेयरधारकों के साथ राष्ट्रीय वीमे सेवा 'सहकारी बीमा' के लिए औपचारिक पंजीकरण करवाया गया। सभी शेयरधारक देश के पांच राज्यों में असंगठित क्षेत्र की महिला कार्यकर्ता हैं। सदस्यता आधारित अन्य ग्यारह संगठनों के साथ 'सेवा बैंक' और 'सेवा' की स्वास्थ्य क्षेत्र की सहकारी समितियों जैसे उनके कई संगठनों ने भी इस नई सहकारी पहल में निवेश किया था। यह पहली सहकारी समिति है, जिसमें महिला और उनके शेयरधारक शामिल हैं। इसके अलावा, केवल महिलाएं ही बीमा पॉलिसी धारक थी और उनके माध्यम से उनके परिवारों को इस बीमा के तहत शामिल किया जा सकता है। वर्तमान में, 'वीमो सेवा' 1,00,000 से अधिक बीमा धारक महिलाओं को 10 बीमा उत्पाद प्रदान कर रही है। इन उत्पादों में स्वास्थ्य बीमा, जीवन बीमा, दुर्घटना बीमा और अस्पताल में भर्ती होने पर आय की हानि का बीमा शामिल है।

'वीमो सेवा' सूक्ष्म बीमा उत्पाद को विकसित करने, प्रदान करने के लिए बीमा अवधारणाओं के बारे में महिलाओं को आवश्यक जानकारी प्रदान करने, अनुकूल उत्पाद प्रदान करने के लिए और इन उत्पादों को बेचने के लिए प्रमुख बीमा कंपनियों के साथ संबंध स्थापित करने, तेजी से सेवा प्रदान करने के लिए डेटाबेस का

रखरखाव और दावा निपटाने के लिए कार्यवाही करने आदि सहित कई सेवाएं प्रदान करती है। 'वीमो सेवा' महिलाओं को 'सेवा' द्वारा प्रदान की जाने वाली अन्य सेवाओं (जैसे सेवा बैंक द्वारा बैंकिंग और सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा सहकारी समिति के माध्यम से प्राथमिक स्वास्थ्य) के साथ भी जोड़ती है।

गरीब महिलाओं की प्राथमिकताओं और आवश्यकताओं पर समझ बनाना

असंगठित क्षेत्र की महिला श्रमिकों को बीमा सुरक्षा प्रदान करना एक मुश्किल काम था। लेकिन, हमेशा की तरह महिलाओं ने ही अपना रास्ता ढूंढ लिया। सबसे पहले शहर और गांव के हमारे सदस्यों के साथ विचार-विमर्श किया गया। हमने युवा और वृद्ध महिलाओं के साथ सलाह मशविरा से उनकी प्राथमिकताओं और जरूरतों को समझने की कोशिश की। महिलाएं बीमा सेवाएं लेने के लिए उत्साहित थी और वे प्रीमियम का भुगतान करने को तैयार थी। इसके बाद हमने इन महिलाओं की जरूरतों, उन्हें किन उत्पादों की सबसे अधिक जरूरत है और वे कितने प्रीमियम का भुगतान कर सकती हैं, पूरी जानकारी लेने के लिए हमने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में एक सर्वेक्षण किया। सर्वेक्षण के निष्कर्ष संगठन में व्यापक रूप से बताए गए, महिलाओं के साथ और अन्य बैठकों के साथ प्रस्तुत किये गये ताकि संभावित बीमा उत्पादों पर विचार प्राप्त किए जा सकें और वे समाधान खोजे जा सकें, जिनसे हमारे गरीब सदस्य इन उत्पादों को प्राप्त कर सकें।

सूक्ष्म बीमा उत्पादों का विकास

हमने सूक्ष्म बीमा उत्पादों को विकसित करने के लिए महिलाओं और बीमा कंपनियों के विशेषज्ञों के साथ छोटी कार्यशालाएं आयोजित की। इसके अलावा, 'सेवा' की बहनों के लिए बीमा क्षेत्र नया होने के कारण हमने बीमा अवधारणा पर प्रशिक्षण सत्र भी रखे। जब महिलाएं इस तरह के सवाल पूछती कि, 'मैं बीमार नहीं पड़ी तो? क्या मुझे मेरे पैसे वापस मिल जाएंगे?', तब हमें उन्हें शांति से समझाना पड़ता था। ऐसी अवधारणा, जिसमें जोखिम की स्थिति से निपटने के लिए सभी व्यक्ति योगदान देते हैं, लेकिन केवल कुछ ही व्यक्तियों को लाभ मिलता है - इस विचार पर सहमत होने में महिलाओं को बहुत समय लगा। 'वीमो सेवा' के पहले पांच साल, यह सेवा जारी रखने के लिए बीमा शिक्षण और क्षमता बढ़ाने में लगे थे। सदस्यों के साथ विचार-विमर्श, बातचीत और विभिन्न उत्पादों और उनकी राशि के बारे में अभी भी चर्चा चल रही है।

संस्थागत व्यवस्था एवं प्राथमिकता का निर्धारण

एक बार सहकारी समिति के रूप में 'वीमो सेवा' का औपचारिक पंजीकरण होने के बाद, इसके पांचों राज्यों के सदस्यों के प्रतिनिधित्व के साथ पांच साल के लिए बोर्ड चुना गया। अब सभी नीतिगत निर्णय बोर्ड द्वारा लिये जाते हैं और मुख्य निर्णय वार्षिक महासभा में लिये जाते हैं। सदस्यों के साथ विचार-विमर्श, बोर्ड की बैठकों में और अन्य मंचों पर सदस्यों से प्राप्त प्रतिक्रियाओं की प्राथमिकता क्रम महिलाओं द्वारा निर्धारित किया जाता है। इस क्षेत्र के विशेषज्ञों द्वारा जरूरी सहायता (बीमा के बारे में जोखिम और प्रीमियम की गणना आदि) प्रदान की जाती है। वार्षिक मूल्य निर्धारण बैठक के दौरान बोर्ड के सदस्य बीमा कंपनियों के साथ बातचीत करते हैं। अब उन्होंने यह मांग प्रस्तुत की है कि कई वर्षों के अनुभव के बाद 'वीमो सेवा' और बीमा कंपनियों के बीच की नहीं होनी चाहिए, इसके बजाय इसे अब पूरी तरह से बीमा कंपनी (बीमाकर्ता) में परिवर्तित करना चाहिए।

प्राथमिकता तय करने की इस प्रक्रिया में कई बार रचनात्मक विचार मिल जाते हैं, जिनसे ऐसे उत्पाद विकसित होते हैं जो उनकी जरूरतों और उनके खर्च करने की क्षमता के साथ मेल खाते हैं। प्राथमिकता सूची में हमेशा स्वास्थ्य बीमा सबसे ऊपर रहता है, जिसमें अस्पताल में इलाज का खर्च काफी हद तक जिम्मेदार है। महिलाओं की पूरे परिवार को बीमा में शामिल किए जाने की मांग को देखते हुए हमने परिवार को शामिल करने वाले सस्ते बीमा उत्पाद का विकास किया। फिर उन्होंने अपनी समस्या बतायी कि परिवार के सदस्य को अस्पताल में भर्ती करवाते समय उनके पास इलाज के लिए पैसे नहीं होते। इसके लिए उन्हें ब्याज पर पैसे उधार लेने पड़ते हैं। इसका उपाय यह बताया गया कि जब उन्हें या परिवार के किसी सदस्य को अस्पताल में भर्ती करना पड़े, तो 'वीमो सेवा' को सूचित करना चाहिए। बाद में, 'वीमो सेवा' ही अस्पताल के इलाज के खर्च का भुगतान करेगा। इससे ऊंची ब्याज दरों पर पैसे उधार नहीं लेने पड़ेंगे।

इसके बाद उन्हें वीमो सेवा को अस्पताल में भर्ती होने के कारण हुई आमदनी के नुकसान की क्षतिपूर्ति के लिये प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना होता है। हमने उनके लिए ऐसा प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया कि एक समान राशि का भुगतान किया जा सके। कई साल पहले विकसित कई सरकारी स्वास्थ्य बीमा कार्यक्रमों में जोड़ा गया यह बीमा उत्पाद लोकप्रिय हुआ है। वास्तव में, गरीबी रेखा के नीचे

(बीपीएल) परिवारों के लिए एक राष्ट्रव्यापी स्वास्थ्य बीमा विकसित करते समय नीति निर्धारकों ने वीमो सेवा और हमारे सदस्यों के साथ परामर्श किया था। इतना ही नहीं, वर्षों के अनुभव के साथ, हमारे द्वारा विकसित प्रक्रियाओं को भी अपनाया गया था।

'वीमो सेवा' के बीमा क्षेत्र में व्यावसायिक कार्मिकों के साथ महिलाओं द्वारा विकसित उत्पादों में कम लागत के जीवन बीमा और बचत से जुड़े उत्पाद शामिल हैं। अंत में, हमारी बहनों ने 'संयुक्त उत्पाद' (बंडल्ड प्रॉडक्ट्स) के विचार को आगे बढ़ाया। इसमें एक संयुक्त प्रीमियम के तहत सस्ती कीमत पर जीवन, स्वास्थ्य, दुर्घटना और संपत्ति बीमा को जोड़ा गया है। बीमा अवधारणा से पूरी तरह से अनजान हमारी बहनों ने प्राथमिकता निर्धारण के साथ-साथ बीमा उत्पाद के विकास और इसके कार्यान्वयन के लिए आवश्यक ज्ञान और कौशल प्राप्त कर लिया है! आवश्यकता आधारित सूक्ष्म बीमा सेवाओं का पिछले तीन वर्षों का निष्पादन काफी प्रभावी रहा है। बीमा सेवा वित्तीय मामले में व्यावहारिक साबित हुई और अब यह प्रति वर्ष 10 प्रतिशत की औसत वृद्धि कर रही है। वर्तमान में हमारे शेयरधारकों को लाभांश प्राप्त हो रहा है। लेकिन वित्तीय और सामाजिक लक्ष्यों के बीच संतुलन के लिए विचार मंथन और प्रयोग करने में हमें 20 साल लगे थे। यह एक बहुत ही लंबी यात्रा है, लेकिन अब 'वीमो सेवा' बीमा के सदस्य सात राज्यों में फैले हुए हैं। इसके साथ वे साथी संगठन भी इसमें शामिल हैं, जो सेवा आंदोलन से जुड़े हुए नहीं हैं। धीरे-धीरे हम देश के विभिन्न भागों में सूक्ष्म बीमा सेवाएं ले जा रहे हैं। अलग-अलग क्षेत्रों में स्थानीय महिलाओं की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न बीमा उत्पाद विकसित किए गए है।

महत्वपूर्ण बात यह है कि महिलाओं और उनके परिवारों को आपातकाल में आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। पिछले दस वर्ष में, 15.9 करोड़ रुपए दावे के रूप में सीधे असंगठित क्षेत्र की महिला मजदूरों को मिले हैं। जैसा कि पहले कहा गया है, 'वीमो सेवा' के कई अनुभवों को राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (आरएसबीवाई) में शामिल किया गया है। इसके अलावा, भारतीय संसदीय बीमा समिति ने 'सूक्ष्म बीमा कवर' को जोखिम में कमी करने वाले कारक के रूप में और गरीबी उन्मूलन के उपायों के रूप में महत्वपूर्ण माना है। बीमा समिति ने संसद सदस्यों की बहुदलीय समिति के समक्ष समर्थन करने के लिए बीमा सेवा सहकारी समिति को आमंत्रित किया था। बोर्ड की सदस्य हमीदा बहन ने इस बारे में प्रस्तुति दी कि किस तरह सूक्ष्म बीमा कवर का विकास हुआ और यह कैसे उस जैसी सैकड़ों बहनों के लिए उद्धारकर्ता साबित हुई। बीमा समिति के अध्यक्ष ने 'सेवा' के बयान को 'आंख खोलने वाला और ताजगी वाला' बताया। इस समिति ने सर्वसम्मति से यह सिफारिश की थी कि देश भर में इस तरह की सूक्ष्म बीमा नवांचार को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और सूक्ष्म बीमा नवांचार सहकारी समिति जैसे समुदाय आधारित संगठनों द्वारा चलाया जाना वांछित है।

चुनौतियां

'वीमो सेवा' की यात्रा कई प्रकार की चुनौतियों से परिपूर्ण और वित्तीय व सामाजिक उद्देश्यों के बीच संतुलन बनाने की चुनौतियां झेल रही है। वित्तीय स्थायित्व प्राप्त करने की प्रक्रिया बहुत उतार-चढ़ाव के साथ धीमी थी। यह पता होने के बावजूद कि महिलाओं से प्राप्त प्रीमियम राशि से होने वाली आय काफी कम थी, फिर भी हमने हमारी पहुंच का विस्तार बढ़ाने की काफी कोशिश की थी। उत्पादों और प्रक्रियाओं को सरल तरीके से समझाने वाले नियमों और शर्तों के साथ महिलाओं की प्राथमिकताओं के लिए अनुकूल होना आवश्यक था। लागत की व्यवस्था करते समय हमारी सेवा की गुणवत्ता और समयबद्धता पर ध्यान केंद्रित किया गया था। भारत में सूक्ष्म बीमा के लिए अनुकूल माहौल की कमी होते हुए भी हम गरीब महिला श्रमिकों के एक बड़े वर्ग को बीमा में शामिल करने के लिए इन चुनौतियों का सामना करते रहे। लाइसेंस हासिल करने के लिए एक अरब रु. की राशि की आवश्यकता होने के कारण पूरी तरह से बीमा कंपनी बनने के बजाय 'वीमो सेवा' ने छोटी राशि के साथ मध्यस्थ के रूप में कार्य करती है। 'वीमो सेवा' बोर्ड ने अपनी व्यापार योजना तैयार की है और हमारे उत्पाद सामान्य आकार के होने के कारण तीन करोड़ रुपयों के होने से यह साबित हुआ है कि कम आय वाले परिवारों को भी आर्थिक दृष्टि से व्यवहार्य सेवाएं और उत्पाद उपलब्ध करवाये जा सकते हैं। 'वीमा सेवा' के इस सफल प्रयास से मुख्य सबक यह मिलता है कि सार्वभौमिक स्वास्थ्य क्षेत्र या सूक्ष्म बीमा क्षेत्र या किसी भी अन्य विकास कार्यक्रम में लोगों मुख्य केन्द्र में रखना चाहिए, जैसा गांधीजी ने कई साल पहले कहा था। यही कारण है कि हमें हमेशा समझाया जाता है कि लोगों को, खासकर हमारे देश की गरीब महिलाओं जैसे जरूरतमंद वर्ग के नेतृत्व में लेकर प्राथमिकताएं तय करनी चाहिए, जिससे हमारे समाज के सभी लोगों को फायदा मिल सके। ■

सामाजिक न्याय की अवधारणा

(ग्रासरूट कार्यकर्ताओं के उपयोग के लिए)

- वंदना सिंह, 'उन्नति' द्वारा संकलित

सामाजिक न्याय की अवधारणा सामाजिक मानदंडों, व्यवस्था, कानून और नैतिकता के क्रमिक विकास की प्रक्रिया से बनती है। यह न्यायसंगत निष्पादन पर जोर देती है और सामाजिक समानता के सिद्धांतों पर आधारित नियम लागू करके समाज में भागीदारी बढ़ाती है। 'सामाजिक न्याय' में प्रयुक्त 'सामाजिक' शब्द समाज में रहने वाले सभी लोगों से संबंधित है, जबकि 'न्याय' शब्द स्वतंत्रता, समानता और अधिकारों से संबंधित है। इस प्रकार, सामाजिक न्याय समाज में हर व्यक्ति के लिए स्वतंत्रता सुनिश्चित करने समानता प्रदान करने और व्यक्तिगत अधिकारों के संरक्षण के लिए है। दूसरे शब्दों में, सामाजिक न्याय का मतलब बिना किसी पूर्वाग्रह या भेदभाव के समाज के सभी व्यक्तियों का क्षमताओं की उच्चतम संभावना के साथ विकास सुनिश्चित हो। हालांकि, 'सामाजिक न्याय' शब्द काफी जटिल है और प्रयोगमूलक रूप से उसका अर्थ नहीं निकाला जा सकता।

जस्टिस कृष्णा अय्यर ने अपनी पुस्तक 'जस्टिस एंड बियोंड' में लिखा है कि सामाजिक न्याय स्थायी या पूरी अवधारणा नहीं है, जिसे सीधा मापा और लागू किया जा सके। यह अवधारणा लचीली और सापेक्ष है। वास्तव में, समाज में न्यायसंगत मानव, न्यायसंगत निष्पादन और न्यायसंगत कार्य सामाजिक न्याय का स्पष्टीकरण है। रूसो का तर्क है कि लोग स्वाभाविक रूप से समान हैं, लेकिन निजी संपत्ति की धारणा ने उसे असमान बनाया है और इन असमानताओं को स्थायी आधार पर खड़ा कर दिया है। इस प्रकार, मानव की पूर्णता के लिए समाज को बेहतर बनाना आवश्यक है। समानता और सामाजिक न्याय की गारंटी देने वाली स्वाभाविक भावनाएं और संवेदनाएं विकसित करके यह लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

सामाजिक न्याय का उद्देश्य समाज को फिर से व्यवस्थित करना है, जिससे सामाजिक संबंधों में जाति, लिंग, धर्म, वंश, प्रांत आदि के आधार पर भेदभाव समाप्त किया जा सके। दूसरी ओर, सामाजिक न्याय में समाज के पिछड़े, वंचित और दलित वर्गों के पक्ष में संरक्षित भेदभाव (Affirmative Actions) को बनाए रखना आवश्यक है। सामाजिक न्याय के विद्वानों द्वारा कई परिभाषाएं दी गई हैं। इस प्रकार, सामान्य रूप में इसकी व्याख्या करना मुश्किल है। लेकिन, न्यायसंगतता के लिए हरेक धारणा सप्रमाण लाक्षणिकता से संबंधित होती है। जॉन रोल्स और रॉबर्ट नोजिक (अमेरिकी दार्शनिक) ने न्याय की सप्रमाण लाक्षणिकता पर जोर दिया है। नोजिक के अनुसार, ऐतिहासिक रूप से अधिकार सप्रमाण न्याय का एक महत्वपूर्ण तत्व है, जिसमें समाज को उसके नुकसान के बारे में पता होता है और नुकसान की भरपाई की ओर झुकाव बढ़ा है। जॉन रोल्स न्याय को तर्कसंगतता के रूप में दिखाता है, जहां यह आग्रह रखा जाता है कि सीमांत समूहों को फायदा मिले।

व्यापक परिप्रेक्ष्य में, सामाजिक न्याय वस्तुओं और संसाधनों के आवंटन कानूनी प्रणाली के माध्यम से, व्यक्ति के अधिकारों की सुरक्षा, मुआवजे, भत्तों और लाभ के नियमों का ध्यान रखता है। दूसरे शब्दों में, सामाजिक न्याय यानि जाति, लिंग, जेंडर या वंश के किसी भी भेदभाव के बिना समाज के सभी लोगों के लिए समान सामाजिक अवसरों की उपलब्धता है। इन असमानताओं की वजह से किसी भी व्यक्ति को वंचित नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि उपरोक्त परिस्थिति सामाजिक विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसलिए, सामाजिक न्याय का मुद्दा सामाजिक समानता और व्यक्तिगत अधिकारों के साथ जुड़ा हुआ है। समान सामाजिक पूंजी सामाजिक न्याय का प्रमुख घटक है, जिसके आधार पर यह आवश्यक है कि नागरिकों को निश्चित सामाजिक अधिकारा, नागरिक अधिकारों और राजनीतिक अधिकारों की गारंटी मिले। सामाजिक न्याय के विचार में मानव की भलाई और लाभ के लिए स्वतंत्रता, समानता और अन्य मानव अधिकारों पर जोर रहता है। लेकिन फ्रेन्क के अनुसार, सामाजिक न्याय का विचार समानता के सिद्धांत से आगे बढ़ते हुए समाज में सहमति-समझौते के सिद्धांत की पुष्टि करता है। उनकी राय में सामाजिक न्याय सुधार के निष्पादन में असमानता होने के बावजूद लोगों पर विशेष ध्यान केंद्रित करता है।

न्याय का समय और परिस्थितियों के साथ भी संबंध होता है। ऐसा भी हो सकता है कि अतीत में जो मामला न्यायसंगत रहा हो, वह वर्तमान समय में न्यायसंगत नहीं भी हो। जैसे प्राचीन ग्रीस और रोमन साम्राज्य में लोगों के पास गुलाम होना एक स्वाभाविक बात थी, लेकिन आधुनिक युग में इसे मानवता के खिलाफ अपराध माना जाता है। इस प्रकार, न्यायसंगतता परिवर्तनवादी धारणा है। यह जगह और समय के अनुसार भिन्न हो सकती है। न्यायसंगतता सामाजिक मानकों और मूल्यों के तरीके को परिलक्षित करती है और उसके आधार पर व्यक्तिगत व्यवहार का मूल्यांकन किया जाता है। इस प्रकार, न्यायसंगतता समाज में व्यक्तियों के मूल्यांकन करने की कसौटी बन जाती है। डीडी राफेल के अनुसार, 'न्यायसंगतता सामाजिक नैतिकता का आधार है और इसका समाज की सामान्य व्यवस्था से संबंध है।' सामाजिक न्याय की अवधारणा को समझते समय न्यायसंगतता के पारंपरिक विचार और सामाजिक न्याय के आधुनिक विचार के बीच में फर्क को समझना जरूरी हो जाता है। बेशक, सामाजिक न्याय का विचार अपेक्षाकृत नया है और यह आधुनिक सामाजिक और आर्थिक विकास के घटनाक्रम की उपज है। न्यायसंगतता के पारंपरिक विचार को विभिन्न चरणों पर रूढ़िवादी अवधारणा के रूप में वर्णित किया गया है और उसमें 'न्यायोचित' (निष्पक्ष, सही) मानवीय गुणों पर जोर दिया गया है। जबकि सामाजिक न्याय की आधुनिक अवधारणा, न्यायसंगत समाज का समर्थन करती है।

सामाजिक न्याय के प्रकार

'सामाजिक न्याय' के मुख्य रूप से पांच प्रकार हैं:

(1) वितरण आधारित न्याय (डिस्ट्रिब्यूटिव जस्टिस) - समाज में माल-सामान के सामाजिक रूप से न्यायसंगत आवंटन से संबंधित है। यदि समाज में आनुषंगिक असमानताएं पैदा नहीं होती हों तो, यह वितरण आधारित न्याय के सिद्धांतों का मार्गदर्शन वाला समाज माना जाएगा।

(2) कार्य प्रणाली आधारित न्याय (प्रोसिजरल जस्टिस) - परिवार, राजनीतिक जीवन आदि में संसाधनों का आवंटन और विवादों को सुलझाने की प्रक्रिया में न्यायसंगतता लाने का विचार है। प्रक्रियात्मक न्याय के एक पहलू का संबंध न्याय प्रदान करने और कानूनी कार्यवाही से जुड़ा हुआ।

(3) पारस्परिक न्याय या पारस्परिक-क्रिया युक्त न्याय (इंटरपर्सनल जस्टिस) - का अर्थ दैनिक जीवन में हर व्यक्ति के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार होना है। समाज केवल कानून और राष्ट्र का बनाया हुआ नहीं है। इसमें सांस्कृतिक संस्थाओं, स्वीकार्य सामाजिक संस्कृति, नैतिक मूल्यों आदि जैसे अनौपचारिक पहलुओं को भी शामिल किया गया है।

(4) दंडात्मक न्याय (रिट्रिब्यूटिव जस्टिस) - जब एक व्यक्ति अन्याय करने के लिए दोषी ठहराया जाए, तो समाज उसको खास प्रकार का दंड देता है। जनता इस दंड को व्यापक रूप से उचित और वैध मानती है।

(5) सुधारात्मक न्याय (रिस्टोरेटिव जस्टिस) - आपराधिक न्यायसंगतता की व्यवस्था है, जो पीड़ितों और समुदाय के साथ दोषी का मेल-मिलाप करवा कर दोषी के पुनर्वास पर ध्यान केंद्रित करती है। यह न्यायसंगतता अपराध और सजा के बारे में पारंपरिक सोच का एक नया विकल्प प्रदान करती है।

'न्याय' के लिए प्राचीन यूनानी और हिंदू दृष्टिकोण

प्राचीन यूनानी और हिंदू दृष्टिकोण के अनुसार, न्याय की अवधारणा अधिकारों के संबंध में नहीं, बल्कि अपने कर्तव्यों को पूरा करने के संदर्भ में है। प्लेटो और अरस्तू दोनों ने व्यक्ति की तुलना में देश को प्राथमिकता दी है। विशेष रूप से प्लेटो न्यायसंगतता को व्यक्ति के वर्ग के अनुरूप उसके दायित्वों के पालन को मानते हैं। प्लेटो का न्यायसंगतता सिद्धांत अलग-अलग नागरिकों के कर्तव्य पर इंगित करने और उन दायित्वों के अनुकूल गुणों के विकास करने पर जोर देता है। प्लेटो की राय में, न्यायसंगतता समाज की उच्चतम गुणवत्ता है। प्लेटो के विचार में, श्रम के विभाजन का सिद्धांत यह है कि हर व्यक्ति, खासकर प्रत्येक वर्ग को वही काम करना चाहिए जिसके लिए वे पूरी तरह से योग्य हों, यही न्यायसंगतता है। अरस्तू न्यायसंगतता को सीधे 'राजनीति' के साथ जोड़ते नहीं। अरस्तू के अनुसार, देश का अंतिम लक्ष्य अपने नागरिकों को बेहतर जीवन स्तर प्रदान करना है। अरस्तू ने लिखा है कि 'पुलिस नागरिकों की रक्षा करती है और उसका अस्तित्व नागरिकों को अच्छा जीवन स्तर प्रदान करने के लिए ही है।' प्राचीन भारतीय परंपरा में, कर्तव्य का दूसरा नाम धर्म है और न्यायसंगतता धर्म की ओर सदाचारपूर्ण आचरण है। इस प्रकार, प्लेटो के न्यायसंगतता के सिद्धांत की तरह ही हिंदू परंपरा में न्यायसंगतता को धर्म द्वारा निर्दिष्ट दायित्वों के अनुपालन के साथ जोड़ा गया है।

'न्याय' का आधुनिक दृष्टिकोण

आधुनिक समय में, न्यायसंगतता की दिशा में मुख्य रूप से दो दृष्टिकोण पर चर्चा केंद्रित रहती है। एक उदारवादी दृष्टिकोण और दूसरा मार्क्सवादी दृष्टिकोण। उदारवादियों का तर्क है कि एक न्यायपूर्ण समाज के लिए व्यक्तिगत अधिकार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता आवश्यक

हैं, जबकि मार्क्सवादी दृष्टिकोण न्यायपूर्ण समाज के लिए समानता पर निर्भर है। उनका मानना है कि जब तक समाज में मौजूदा असमानताओं को दूर नहीं किया जाएगा, तब तक न्यायसंगत समाज नहीं बनेगा। लेकिन समकालीन राजनीतिक दर्शन में न्यायसंगतता के बारे स्वतंत्रता, समानता की बहस समाप्त हो गयी है। स्वतंत्रता, समानता न्यायसंगतता के घटक हैं।

'न्याय' का उदारवादी दृष्टिकोण

आधुनिक समय में न्यायसंगतता के उदारवादी दृष्टिकोण को व्यक्तिगत अधिकारों के नजरिए से परिभाषित किया जाता है। कानून द्वारा व्यक्ति को अधिकार दिए जाते हैं और देश इन अधिकारों द्वारा मर्यादित रहता है। इस प्रकार, उदारवादी परंपरा में, न्यायसंगतता प्रत्येक व्यक्ति को उसके अधिकार प्रदान करती है। उदारवादी जीवन के हर क्षेत्र में व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर जोर देते हैं और राजनीतिक न्यायसंगतता उसके केन्द्र में होती है। उनके लिए आर्थिक न्यायसंगतता का एक अनिवार्य हिस्सा मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था है। न्यायसंगतता के आधुनिक विचार का विकास जॉन लॉक, बेन्थम, जॉन स्टुअर्ट मिल, स्पेंसर और एडम स्मिथ के लेखन में हुआ था। रॉबर्ट नोजिक (अराजकता, राज्य और यूटोपिया), जॉन रॉल्स (ए थ्योरी ऑफ जस्टिस) और हायेक के हाल के लेखन में यह विचार दिखाई देता है।

व्यक्तिगत अधिकार लॉक के राजनीतिक दर्शन का मुख्य मुद्दा था। उल्लेखनीय है कि लॉक व्यक्तिवादी विचारक थे। उनकी राय में, मानव के व्यक्तिगत अधिकारों की रक्षा और आम हितों का संरक्षण एक ही बात है। इस प्रकार, उदारवादी राजनीतिक सिद्धांत न्यायसंगतता के अधिकार का अनुपालन मानता है और अधिकार कानून का सर्जक है।

रोल्स ने अपनी पुस्तक 'ए थ्योरी ऑफ जस्टिस', 1971 में सामाजिक अनुबंध की परिचित प्रयुक्ति का उपयोग करके एक समान वितरण (वितरित न्याय) न्यायसंगतता (समाज में वस्तुओं का न्यायपूर्ण वितरण) की समस्या हल करने का प्रयत्न किया है। जिसके परिणामस्वरूप सिद्धांत, औचित्यपूर्ण न्यायसंगतता (निष्पक्षता के रूप में न्याय) के रूप में जाना जाता है, जिसके माध्यम से रोल्स ने न्यायसंगतता के दो सिद्धांत दिए हैं - स्वतंत्रता का सिद्धांत (लिबर्टी सिद्धांत) और भिन्नता का सिद्धांत (डिफरेन्स सिद्धांत)। स्वतंत्रता के सिद्धांत के अनुसार, हर व्यक्ति को एक समान मूलभूत स्वतंत्रता की योजना बनाने का समान अधिकार है, जो सभी व्यक्तियों की स्वतंत्रता की समान प्रकार की योजना के साथ जुड़ी होती है। भिन्नता सिद्धांत के अनुसार, सामाजिक और आर्थिक असमानताओं द्वारा दो शर्तों का पूरा होना आवश्यक है। सबसे पहले, अवसरों की उचित समानता की शर्तों के तहत कार्यालयों और पदों से जुड़ी होनी चाहिए, और दूसरी बात, समाज के वंचित और जरूरतमंद व्यक्तियों को उससे काफी लाभ मिलना चाहिए।

'न्याय' का मार्क्सवादी दृष्टिकोण

मार्क्सवाद के अनुसार, देश एक वर्ग संगठन है। कम्युनिस्ट मेनिफेस्टो में मार्क्स और एंजेल्स ने कहा कि मानव समाज का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है। मार्क्सवादी विचारधारा के अनुसार, पूंजीवादी समाज ऐसा लोकतंत्र होता है, जिसे कम कर दिया जाता है और जिसे कंगाल बना दिया जाता है। इतना ही नहीं, लोकतंत्र केवल अमीर वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग के लिए ही होता है। कानून, नैतिकता, अदालत, पुलिस बल यह पूरा ढांचा वर्चस्व वाले वर्ग की वर्चस्वता स्थापित एवं संचालित करने के लिए बनाया जाता है। इस समाज में न्यायसंगतता केवल आर्थिक प्रभुत्व वाले तथा रूढ़ीवादी मध्यम वर्ग के हितों को पूरा करती है। श्रमिक वर्ग के शोषण में ही उसका हित होता है।

मार्क्सवादी दृष्टिकोण के अनुसार, उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व निजी स्वामित्व के अन्याय का स्रोत है। यह मध्यम वर्ग और श्रमिक (गरीब) वर्ग के बीच में सामाजिक विभाजन खड़ा करता है। निजी संपत्ति को नष्ट कर दिया जाए, तो एक वर्गहीन समाज का बनेगा और परिणाम स्वरूप साम्यवादी समाज का उद्‌भव होगा। यह न्यायसंगतता का एक मॉडल राष्ट्र बन जाएगा।

महात्मा गांधी एवं सामाजिक न्याय

गांधीजी ने न्यायसंगतता के मुद्दे को अन्य विचारकों और दार्शनिकों की तरह व्यक्त नहीं किया। गांधीजी के लेखन में सामाजिक न्याय के सिद्धांत या अवधारणा पर स्वतंत्र रूप से विचार-विमर्श नहीं किया गया है। हालांकि, न्यायसंगतता उनके सभी विचारों का मानदंड है। गांधीजी ने भारत में सामाजिक न्याय आंदोलन की नींव रखी थी। गांधीजी से पहले कई कवियों, संतों और समाज सुधारकों ने जातिगत भेदभाव और छुआछूत के कारण पैदा होने वाले सामाजिक अन्याय के मुद्दे प्रस्तुत किए थे। सामाजिक न्याय एक बहु-आयामी अवधारणा है। यह विभिन्न गांधीवादी सोच में दिखाई देती है। जैसे, सत्य और अहिंसा की अवधारणा, रामराज्य की अवधारणा, स्वराज, सर्वोदय, सत्याग्रह और न्यासिता (ट्रस्टीशिप) का सिद्धांत। गांधीजी के इन

सिद्धांतों की दार्शनिक अवधारणाएं न्यायसंगत सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रणाली का आधार प्रदान करती हैं। शासन और शासन के विकेन्द्रीकरण का गांधीजी का विचार व्यक्तिगत स्वतंतत्रता के लिए एक गारंटी है। 26 जुलाई, 1942 में प्रकाशित हरिजन पत्रिका में गांधीजी ने लिखा था, "ग्राम स्वराज का मेरा विचार यह है कि वह (गांव) पूरी तरह लोकतांत्रिक हो, अपनी आवश्यक जरूरतों के लिए आसपास के प्रदेशों या गांवों पर निर्भर नहीं हो (आत्मनिर्भर हो) और इसके बावजूद एक दूसरे पर आवश्यक निर्भरता वाले मामलों में अन्य क्षेत्रों पर निर्भर हो।"

पंचायती राज का मतलब है स्थानीय स्तर पर कार्यों की व्यवस्था करने के लिए वैध राजनीतिक शासन में लोगों को शामिल करने की व्यवस्था। इसके अलावा, गांवों को शहरों के राजनीतिक वर्चस्व और आर्थिक शोषण से मुक्त करने के लिए पंचायती राज का गठन किया गया था। गांधीजी का पंचायती राज ग्रामीण समुदाय के पूर्ण नैतिक विकास के लिए व्यक्ति और समुदाय की स्वतंत्रता की रक्षा करता है। गांधीजी ने मानव समानता पर बल दिया था। वे जानते थे कि राजनीतिक संस्थाएं लोगों के आर्थिक कल्याण तक ही सुसंगत हैं। गांधीजी के अनुसार, "आर्थिक समानता की मेरी अवधारणा का यह मतलब बिल्कुल नहीं है कि हर व्यक्ति को समान राशि मिलेगी। दरअसल, मेरी अवधारणा का यह मतलब है कि हर व्यक्ति को उसकी जरूरतें पूरी होने लायक राशि जरूर मिले।" गांधीजी ने आर्थिक न्यायसंगत के पांच विकल्प प्रस्तुत किए हैं, जो इस प्रकार हैं:

1. धन और सत्ता का विकेन्द्रीकरण
2. कुटीर उद्योग और लघु उद्योग
3. उपभोक्तावाद का विरोध
4. समान वितरण, और
5. न्यासिता (ट्रस्टीशिप)।

गांधी ने बताया था कि, "इसका मतलब यह भी होता है कि हाल के दिनों में जो क्रूर असमानताएं प्रचलित हैं, उन्हें अहिंसा दूर करना चाहिए।"

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर एवं सामाजिक न्याय

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर भारत के पिछड़े और दलित वर्गों की समस्याओं को उठाने वाले अग्रणी विचारकों और समाज सुधारकों में से एक थे। अफसोस की बात है कि बाबा साहेब अम्बेडकर ने 'सामाजिक न्यायसंगतता' की कोई विशिष्ट परिभाषा या सिद्धांत प्रस्तुत नहीं किया। लेकिन, प्लेटो और रोल्स द्वारा प्रस्तुत सामाजिक न्याय के सिद्धांतों के आधार पर हम बाबा साहेब अम्बेडकर के विचारों में व्यक्त सामाजिक न्याय के बुनियादी सांस्कृतिक और ढांचागत सिद्धांत पाप्त कर सकते हैं। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भारत में सामाजिक न्याय की नींव रखने वाले लोगों में शामिल हैं। न्याय की अवधारणा के नए मानकों का शुभारंभ करने वाले बाबा साहेब अम्बेडकर थे। हम उन्हें 'सामाजिक न्याय के सबसे अच्छे विद्वान' के रूप में संबोधित करते हैं। वे खुद सामाजिक अन्याय का शिकार बने थे, उन्हें अपार कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। उन्होंने अन्याय बर्दाश्त नहीं किया और अन्याय के खिलाफ लड़ाई छेड़ी थी। अम्बेडकर न्यायसंगतता की मुक्त अवधारणा रखते थे। इन बातों को ध्यान में रखते हुए, अम्बेडकर की न्यायसंगतता की अवधारणा के मर्म में मानव समानता, कल्याणकारी सामग्री का समान वितरण और भेदभाव रहित समाज था। इस प्रकार, अम्बेडकर के विचारों के अनुसार, सामाजिक न्याय में परस्पर सम्मान और करुणा का महत्वपूर्ण स्थान है। अम्बेडकर पर मानव समानता और करुणा के बेजोड़ हिमायती भगवान बुद्ध के विचारों का गहरा प्रभाव था। इसके अलावा, वे जॉन डुई, कार्लाइल, कार्ल मार्क्स, कबीर, महात्मा फुले और अन्य विद्वानों से भी प्रभावित थे। अम्बेडकर के अनुसार, समानता देश की आत्मा है। उन्होंने कहा, "समानता काल्पनिक हो सकती है, इसके बावजूद हमें शासन व्यवस्था के सिद्धांतों के रूप में इसे स्वीकार कर लेना चाहिए।"

संदर्भ सूची:

1. वी.आर.कृष्ण अय्यर, जस्टिस एंड बियॉन्ड, दीप एंड दीप पब्लिकेशंस, 1980
2. निलंजना जैन, राजनीतिक सिद्धांत और राज्य व्यवहार में समस्याएं, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2005
3. डी.डी. रफेल, राजनीतिक फिलॉसफी की समस्या, लंदन मैकमिलन, 1979
4. डब्ल्यू.के. फ्रैंकेना, सामाजिक न्याय की अवधारणा, 1962
5. सामाजिक न्याय के आयाम, ओ.पी. गौबा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1983
6. अरुंधति राय, द डॉक्टर एंड द सेंट, कारवां मैगज़ीन, 2014
7. अंतरराष्ट्रीय फिलॉसफी विश्वकोष (www.iep.utm.edu) ■

आपदा प्रबंधनः संगठनात्मक भागीदारी एवं हितधारकों के समन्वय में तेजी लाने की आवश्यकता

- बिनोय आचार्य, उन्नति

आपदा जोखिम में कमी पर 'एशियन मिनिस्ट्रियल कोन्फ्रेन्स ऑन डिजास्टर रिस्क रिडक्सन' (एएमसीडीआरआर), दिल्ली में अधिवेशन से पूर्व बैठक में प्रस्तुति, 2 नवंबर, 2016

- स्थानीय स्तर के क्रियान्वयन में नागरिक समाज की भागीदारी का 'सेंडाई' बुनियादी ढांचा

'सेंडाई' फ्रेम वर्क की प्राथमिकता-2 में आपदा प्रबंधन को मजबूत करने का उल्लेख किया गया है। जिसमें गांव, जिला, राज्य और देश में सभी स्तर पर कानून, नियम और विभिन्न हितधारको के साथ सामूहिक प्रयासों से आपदा जोखिम में कमी की जा सकती है। 'आपदा प्रबंधन' जोखिम में कमी करने का एक मुख्य कारक है।

आपदा प्रबंधन अपेक्षाकृत नया क्षेत्र है। आपदा प्रबंधन सरकारी व्यवस्था और शासन तंत्र से भी अधिक विस्तृत है। यह स्थानीय से लेकर वैश्विक तक सभी स्तरों पर सहनिर्देशित रूप में कार्य करने वाले हितधारकों की प्रक्रिया, प्रौद्योगिकी, जुड़ाव और समूहों से संबंधित है। आपदा प्रबंधन पारंपरिक रूप से विभिन्न ढांचों व विषय में विभाजित किया जाता रहा है। 'आपदा प्रबंधन' को मुख्य रूप से आपदा प्रबंधन विभाग के रूप में देखा जाता है, जिसका नागरिक समाज और कॉर्पोरेट इकाइयों के साथ कम संपर्क रहता है। संकट के समय में ही यह विभाग दिखाई देता है। इसको छोड़कर शायद ही कभी रोजमर्रा की जिंदगी में इसे देखा जाता है। आपदा के लिए संयुक्त राष्ट्र अंतरर्राष्ट्रीय जोखिम घटाव रणनीति (यूएनआईएसडीआर) की 2011 की 'ग्लोबल आंकलन रिपोर्ट' के अनुसार, आपदा के समय होन वाली मृत्यु के आंकड़ों को घटाने अलावा, वर्तमान आपदा प्रबंधन क्षमताएं और व्यवस्थाएं अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल नहीं रही है।

आपदा प्रबंधन की प्रभावशीलता को हितधारकों की भागीदारी, सहयोग, जवाबदेही और पारदर्शिता से समझा जा सकता है। प्रबंधन की गुणवत्ता विकास एवं निसहाय घटाव का प्रभाव निर्धारित करती है (Djalamte, 2012)। आपदा प्रबंधन जोखिम के समय वह प्रबंधन प्रणाली है, जो संयुक्त रूप से किया जाता है और इसमें बहुपक्षीय कार्रवाई की जाती है। संकट की स्थिति के कार्य निष्पादन का मापन करने वाले सहयोग और सहकार के सूचक संगठनात्मक विकास सहयोग और संस्थागत उपाय के बारे में हैं। जोखिम प्रबंधन सूचकांक (आरएमआई) संकट की स्थिति की पहचान, संकट की स्थिति में कमी (जोखिम में कमी), आपदा प्रबंधन (प्रतिक्रिया और स्थिति पूर्ववत करना) और प्रबंधन (संस्थापन) पर ध्यान देता है।

आपदा की संभावनाएं बने रहना, शासन की विफलता का संकेत है। संकट की स्थिति को कम करने में प्रशासनिक व्यवस्था को सहयोग करना चाहिए। सरकार द्वारा स्थापित प्रशासनिक ढांचा समन्वय और सहकार के बिना जोखिम कम नहीं कर पाएगा। एक अवलोकन के अनुसार, आपदा प्रतिक्रिया के समय उत्पन्न सहयोगी व्यवस्था में जब तक इच्छा शक्ति की कमी रहेगी, तब तक यह व्यवस्था निष्क्रिय बनी रहेगी। संसाधनों की कमी, योग्यता/स्वीकृति की कमी और सहयोग की कमी आदि जैसे कारक राष्ट्रीय और स्थानीय स्तर के संगठनों के गठन व प्रभावशीलता में बाधा बनते हैं। भारत में आपदा की स्थिति को कम करने के लिए स्थानीय संपर्क/मंच की स्थापना के कई उदाहरण हैं। स्वयं शिक्षण प्रयोग आपदा के बाद पुनर्वास के समय सुरक्षित आवास निर्माण पर नजर रखने के लिए महिला तकनीकी स्वयं सेविकाएं तैयार करता है। महाराष्ट्र में सखी महिला फेडरेशन सूखे की स्थिति को कम करने के क्षेत्र में कार्य कर रही है। गांव स्तर के विभिन्न संगठनों द्वारा समुदाय आधारित कोष (सीएफडी) बनाना, ऑनर ड्रिवन रिकंस्ट्रक्शन्स कोलेबरेट (ओडीआरसी) के तहत संगठनों के समूह द्वारा घर के मालिक की इच्छा अनुसार सुरक्षित आवास पुनर्निमाण नीति निर्धारण आदि इस प्रकार के कुछ उदाहरण हैं। कॉर्पोरेट्स, शिक्षाविदों जैसे गैर-पारंपरिक हितधारकों की अनुपस्थिति आंखों में चुभती है। एशियन मिनिस्ट्रियल कोन्फ्रेरन्स ऑन डिजास्टर

रिस्क रिडक्शन (नई दिल्ली, 2016) के तहत 'बिल्ड बेक बैटर' विषय पर का आयोजन किया गया था, जिसमें सरकार (एनडीएमए), नागरिक समाज संगठनों (सीड्स, हुनरशाला, ओडीआरसी, उन्नति) और शैक्षिक संस्थानों (टीआईएसएस - मुंबई, एसपीए - नई दिल्ली) ने भी भाग लिया था। इस प्रकार का आयोजन नियमित रूप से होना रहने चाहिए। उल्लेखनीय है कि अग्रणी शोधकर्ताओं के प्रोत्साहन वाला जेंडर डिजास्टर नेटवर्क (GDN) आपदा प्रबंधन की जेंडर समस्याओं के क्षेत्र में गहन ज्ञान रखता है और इस क्षेत्र में उसका योगदान महत्वपूर्ण है। एशियाई देशों में ऐसे संगठनों का अभाव है। उत्साहजनक बात यह है कि एएमसीडीआरआर के दौरान आपदा रोकथाम और आपदाओं के प्रभावों को कम करने के उपायों के बारे में शिक्षा प्राप्त करने के लिए लोगों को प्रोत्साहित करने के लिए एशियन लोकल लीडर्स फॉर डिजास्टर रेजिलिएन्स (ऑलफॉरडीआर) नाम का नया नेटवर्क शुरू किया गया था। मार्च, 2016 में, सेंडाई सम्मेलन के तुरंत बाद ऑस्ट्रिया में यूरोपीय देशों को शामिल करते हुए वीमेन एक्सचेन्ज फॉर डीआरआर - वीफॉरडीआरआर नेटवर्क का गठन किया गया था।

सरकार द्वारा आपदा प्रबंधन, व्यवस्थापन और नियामक ढांचे में सुधार होने के बावजूद, केवल इसी से संकट की स्थिति में जोखिम के घटाव में सुधार नहीं हो सकता है। विभिन्न हितधारकों की भूमिका में स्पष्टता का अभाव है। मुख्य रूप से आपदा प्रतिक्रिया के दौरान प्रोत्साहित किए जाने वाले स्थानीय समूहों के बारे में विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं होती। ऐसे कई उचित नेटवर्क भूमिका की अस्पष्टता और सहयोग, सहनिर्देशन और संसाधनों के अभाव के कारण धीरे धीरे निष्क्रिय हो जाते हैं। अक्सर, आपदा के बाद यह समझने प्रयास किए जाते हैं कि कमी कहां रह गई थी और सबक को संकलित किया जाता है, लेकिन प्रशासनिक क्षेत्र में इससे कोई सुधार नहीं आता। प्रबंधन क्षेत्र की विफलताओं का दस्तावेजीकरण होना आवश्यक है और सरकार की विफलताओं के अलावा हितधारकों, सहयोग, भागीदारी, आदि के क्षेत्र के सुधार पर ध्यान केंद्रित करने की जरूरत है।

ओस्मान डी कार्डो के अनुसार, आपदा संकट के विवरण को सूक्ष्म स्तर पर सविस्तार दर्ज किया जाता है, नीति तैयार करने के लिए इसका संकलन बड़े पैमाने पर किया जाता है और इस प्रक्रिया में सभी विवरण गायब हो जाते हैं। इस प्रकार स्थानीय स्तर के समूह (नेटवर्क) में तेजी लाने की आवश्यक है। अलग-अलग स्थानों में स्थानीय स्तर पर बनाए गए समूहों ने अग्रिम चेतावनी देने, खतरनाक स्थानों की जांच करने और बचाव कार्य करने के क्षेत्र में प्रभावी भूमिका निभाई है। उत्तर प्रदेश के बहराइच जिले के केसरगंज तहसील के स्थानीय स्वैच्छिक संगठन 'सहभागी शिक्षण केन्द्र' (एसएसके) ने पूर्व चेतावनी देने और विस्थापन के लिए ग्राम पंचायत और जिला प्रशासन के सहयोग से बचाव दल (टास्क फोर्स) का गठन किया है। कई ग्राम पंचायतों में मोटर चालित नावें हैं। वे नाव जिला आपदा प्रबंधन प्राधिकरण को जरूरत के आधार पर देते हैं। 'उन्नति' ने स्कूल सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए गुजरात के कच्छ जिले की भचाऊ तहसील में कई स्कूलों के साथ काम किया है। लेकिन, जैसा कि पहले कहा गया है, स्थानीय समूहों की क्षमता बढ़ाने के लिए विशेष संसाधन उपलब्ध नहीं हैं।

यूएनडीपी प्रबंधन को इस प्रकार परिभाषित करता है सभी "स्तरों पर देश के मामलों के प्रबंधन में राजनीतिक, आर्थिक और प्रशासनिक निष्पादन।" इसमें व्यवस्था, प्रक्रिया, नागरिक और संस्थाएं शामिल है, जिनके माध्यम से वह अपने हित व्यक्त करता है, अपने कानूनी अधिकारों का उपयोग करता है, अपने कर्तव्यों का निर्वाह करता है और मतभेदों का समाधान करता है। शासन से प्रबंधन बेहतर होता है। यह निजी क्षेत्र और नागरिक समाज सहित सभी प्रासंगिक समूहों को शामिल कर लेता है। आपदा प्रबंधन में सत्ता या काम सौंपना स्वागत योग्य है और यही वास्तविकता भी है। प्रबंधन से लचीलापन पैदा होता है। स्थानीय स्तर पर सामुदायिक लचीलापन बनाने में प्रबंधन की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। एड्रियन लेफ्टविच और कुणाल सेन (2011) ने ठीक ही उद्धृत किया है, 'शोक मत करो - उचित व्यवस्था करो।' ■

विकलांग व्यक्ति अधिकार अधिनियम, 2016 - मुख्य विशेषताएं

- दीपा सोनपाल, उन्नति

आखिरकार, संसद के शीतकालीन सत्र में 'विकलांग व्यक्ति अधिकार अधिनियम, 2016' पास हो ही गया। संयुक्त राष्ट्र के विकलांग व्यक्ति अधिकार समझौता (2007) पर हस्ताक्षर करने वाले प्रथम देशों में भारत भी शामिल है। इस समझौते ने विकलांगता के चिकित्सा या दान-धर्म वाले मॉडल को सामाजिक और मानव अधिकार आधारित मॉडल में बदल दिया है। सभी मौजूदा कानून, नीतियां, कार्यक्रम, योजनाएं इस समझौते के अनुसार ही होना आवश्यक है।

मुख्य विशेषताएं

नए अधिनियम में 1995 के अधिनियम की 7 विकलांगताओं के स्थान पर 21 विकलांगताओं को शामिल किया गया है, जो इस प्रकार हैं:

1. शारीरिक विकलांगता

ए. लोकोमोटर - कुष्ठ (लेप्रोसी क्योर्ड), सेरेब्रल पाल्सी, ड्वार्फिज्म (बौनापन), मस्क्युलर डायस्ट्रोफी और एसिड हमले के शिकार।

बी. दृष्टि दोष - कम दिखना और अंधापन।

सी. श्रवण दोष - सुनने में दिक्कत और बहरापन।

डी. बोलने और भाषा की विकलांगता

2. बौद्धिक विकलांगता

सीखने की निश्चित विकलांगता और ऑटिज्म स्पेक्ट्रम विकार

3. मानसिक व्यवहार - मानसिक बीमारी

4. ए. मल्टीपल स्क्लेरोसिस और पार्किंसंस जैसी जीर्ण स्नायविक स्थिति और

बी. थेलेसेमिया, हेमोफिलिया, सिकलसेल बीमारी जैसी खून से संबंधित कमियों की वजह से विकलांगता

5. बहरापन, अंधापन सहित एक से अधिक विकलांगता

नए अधिनियम के अनुसार, विकलांगता के संदर्भ में 'भेदभाव' में विकलांगता के आधार पर (रहने की उचित सुविधा प्रदान करने से मना करने सहित) किए जाने वाला कोई भी भेदभाव, बहिष्कार और नियंत्रण शामिल है।

संस्थान की परिभाषा में 'निजी संस्थान' शामिल हैं और सार्वजनिक भवनों की परिभाषा में जनता द्वारा बड़े पैमाने पर इस्तेमाल होने वाले सभी सरकारी और निजी भवन शामिल हैं। निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की अवधारणा में सभी पंजीकृत स्कूलों को शामिल किया गया है।

विकलांगता को तीन स्तरों पर परिभाषित किया गया है - विकलांगता व्यक्ति, आधार चिह्न (बेंच मार्क) विकलांगता और सहायता की आवश्यकता वाले व्यक्ति।

यह अधिनियम उत्पादों, सेवाओं, पर्यावरण और सहायक उपकरणों के मामले में सार्वभौमिक डिजाइन की अवधारणा को मान्यता देता है। संप्रेषण अवधारणा में संप्रेषण के सभी प्रकार, ब्रेल सांकेतिक भाषा, बड़े प्रिंट, संवर्धित और वैकल्पिक प्रकार मान्य हैं।

- इसके अधिकार क्षेत्र में सरकारी और निजी क्षेत्र दोनों को शामिल किया जाएगा।
- सरकारी सहायता और सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त उच्च शिक्षण संस्थानों में पांच फीसदी आरक्षण।
- सरकारी संस्थानों में आधार चिह्न (बेंच मार्क) विकलांग व्यक्तियों के लिए चार फीसदी आरक्षण।
- सार्वभौमिक पहचान पत्र (आई-कार्ड) जारी करने के लिए विशेष प्रावधान किया गया है। यह देश भर में मानक और पहचान के लिए वैध माना जाएगा।
- अवरोध मुक्त वातावरण का सृजन नहीं करने और जरूरतों की पूर्ति नहीं होने पर सजा का प्रावधान।

- राज्यों को अपनी आर्थिक क्षमता में सामाजिक सुरक्षा लाभ प्रदान करना होगा। लेकिन ये लाभ अन्यों के लाभ की तुलना में 25 प्रतिशत से अधिक होना चाहिए।
- सरकार की गरीबी उन्मूलन योजनाओं और विकास कार्यक्रमों में पांच प्रतिशत आरक्षण।
- सेवा प्रदाताओं, हितधारकों आदि सभी लोगों को विकलांगता से संबंधित पहलुओं के बारे में जानकारी प्रदान करने का प्रावधान।
- सेवा प्रदाताओं को दिए जाने वाले प्रशिक्षण एवं शैक्षिक पाठ्यक्रम में विकलांगता का विषय शामिल करना जरूरी है।
- विकलांग बच्चों और महिलाओं के लिए समान स्तर पर आवास और भूमि आवंटन, स्वास्थ्य सेवाओं, बच्चों के लालन-पालन, बेरोजगारी भत्ता और देखभाल करने वाले व्यक्ति को धनराशि (भत्ते) आदि का विशेष प्रावधान किया गया है।
- सभी विकलांग व्यक्तियों को हिंसा, उत्पीड़न, अत्याचार और शोषण के खिलाफ सुरक्षा प्रदान की गई है। प्राकृतिक या मानव निर्मित आपदाओं और संघर्ष की स्थितियों में सभी विकलांग व्यक्तियों को सरंक्षण और सुरक्षा प्रदान की जाती है।
- जिला स्तर पर विशिष्ट अदालतों के गठन का प्रावधान किया गया है और अधिकृत लोक अभियोजक की सेवाएं प्रदान करने का प्रावधान है।
- जिला स्तर पर सेवाओं को बढ़ावा देने और उनकी निगरानी के लिए प्रत्येक जिले में जिला विकलांगता विकास समिति रहेगी।
- पालक या सरंक्षक के स्थान पर 'सीमित संरक्षण'।
- सीमित सरंक्षण की सहायता के प्रावधान के साथ प्रत्येक व्यक्ति की कानूनी क्षमता को मान्यता दी गई।

विकलांग व्यक्ति अधिकार अधिनियम, 1995 में दंड का प्रावधान नहीं था, जबकि नए अधिनियम में प्रथम उल्लंघन के लिए 10,000 रुपये का जुर्माना और फिर बाद के उल्लंघन के लिए 50,000 रुपये से लेकर पांच लाख रुपये तक दंड का प्रावधान है। जो व्यक्ति धोखा देकर आधार चिह्न (बेंच मार्क) वाले विकलांग व्यक्तियों का कोई भी फायदा उठाने की कोशिश करेगा, तो उसे दो साल की कैद या एक लाख रुपये तक का जुर्माना या दोनों सजा हो सकती हैं। जो व्यक्ति विकलांग महिला और बच्चे को तंग करेगा या उसका अपमान करेगा, उसका दाना-पानी, सहायक साधन और उपकरण को उसे न देकर अपने पास रखेगा, विकलांग महिला या बच्चे का यौन उत्पीड़न करेगा, विकलांग महिला की किसी भी प्रकार की सर्जरी करवाएगा या उसकी सहमति के बिना गर्भपात करवाएगा, तो यह एक दंडनीय अपराध होगा। इसके लिए उसे छह महीने से लेकर पांच साल तक की सजा और जुर्माना भी हो सकता है। ■

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति - 2017
- आम जनता के लिए स्वास्थ्य सेवा का नया अवसर

- मीराई चटर्जी
निदेशक, 'सेवा' सामाजिक सुरक्षा
पूर्व सदस्य, उच्च स्तरीय विशेषज्ञ समूह, सार्वभौमिक स्वास्थ्य देखभाल, 2010-11

भारत में 40 करोड़ से अधिक काम करने वाले लोग हैं, इनमें से अधिकांश लोग गरीब और निःसहाय हैं। उनके लिए उनका स्वास्थ्य एकमात्र पूंजी है। जब तक लोग बीमार नहीं पड़ते, तब तक वे काम करते हैं और कमाई कर के घर चलाते हैं। जब वे बीमार पड़ जाते हैं तो उनकी कमाई लगभग समाप्त हो जाती है और बीमारी के इलाज के लिए खर्च बढ़ जाता है और कर्जा भी हो जाता है। लगभग देश में 6 करोड़ लोग स्वास्थ्य पर होने वाले खर्चे के कारण गरीबी रेखा से नीचे आ जाते हैं। इसके अलावा देश के ग़रीब लोग छोटे घरों और झोंपड़ों में रहते हैं जहां जल, स्वच्छता जैसी बुनियादी सुविधाओं की कमी होती है। इन सभी कारणों की वजह से स्वास्थ्य सुविधा देश के गरीबों के लिए एक जटिल प्रश्न है। सार्वजनिक और सर्वव्यापी स्वास्थ्य सेवा गरीबी उन्मूलन के लिए अत्यंत आवश्यक घटक है। सार्वभौमिक स्वास्थ्य सेवा की उपलब्धता को बढ़ाने के लिए भारत सरकार ने हाल ही में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति को मंजूरी दी है। जनवरी -2015 में सरकार ने पहली बार इस नीति का मसौदा स्वास्थ्य मंत्रालय की वेबसाइट पर रखा था एवं टिप्पणियां और सुझाव मांगे थे। मंत्रालय को देश भर से हजारों की संख्या में सलाह व सुझाव आए थे, जिनका अध्ययन करके नई राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में शामिल किया गया था। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में पूर्ववर्ती सार्वभौमिक स्वास्थ्य देखभाल के लिए उच्च स्तरीय विशेषज्ञ समूह की (2010-11) सिफारिशें भी शामिल की गई हैं। इस समूह ने जवाहरलाल नेहरु और सर जोसेफ बोर की अध्यक्षता में पूर्ववर्ती आयोगों की सिफारिशों का भी अध्ययन किया था। सभी समितियों और मौजूदा नीति ने प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल को आम लोगों के घर तक पहुंचाने पर जोर दिया है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति की महत्वपूर्ण विशेषताएं: नई राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2017

जनवरी 2015 में केंद्र सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय ने नीति के मसौदे को वेबसाइट पर रखकर भारत के सभी नागरिकों को उसे पढ़ने और अपनी राय देने का अनुरोध किया था। मंत्रालय का कहना है कि देश भर से इतने सारे सुझाव आए कि उनकी छंटाई के लिए छह महीने तक काम करना पड़ा था। इसकी कल्पना ही नहीं थी कि देश के लोग अपने स्वास्थ्य के बारे में इतनी रुचि लेते हैं। हाल ही में प्रधान मंत्री और उनके मंत्रिमंडल ने इस स्वास्थ्य नीति को स्वीकार किया है और अब धीरे-धीरे इस नीति को लागू किया जाएगा। आइए देखें कि इस नीति में हमारे लिए क्या-क्या हैं:

1. सबसे महत्वपूर्ण विषय है कि स्वास्थ्य सेवा हर नागरिक को मिलेगी। सार्वभौमिक स्वास्थ्य में अब देश का कोई भी नागरिक या श्रमिक बाकी नहीं रहेगा, चाहे वह एपीएल हो या बीएपीएल।
2. यदि सार्वभौमिक स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध करानी हो तो इसके लिए उचित बजट और वित्तीय व्यवस्था होना आवश्यक है। आनंद की बात है कि नई नीति में स्वास्थ्य के लिए बजट को बढ़ाने के बारे में सरकार ने पांच वर्षों में उचित बजट आवंटन के लिए कहा है कि इस समय जीडीपी का सिर्फ 1.2 प्रतिशत सार्वजनिक स्वास्थ्य पर खर्च होता है, जिसे 2025 में दुगुना करके 2.5 प्रतिशत कर दिया जाएगा।
3. प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा पर अधिक जोर दिया जाएगा।
4. दो-तिहाई बजट प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा पर ही खर्च किया जाएगा, ताकि घर के पास और श्रमजीवी कर्मचारियों के निकट स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध हो सकेगी। विशेष उप केन्द्र और प्राथमिक स्वास्थ्य के अलावा स्वास्थ्य कल्याण केंद्र बनाये जाएंगे।
5. इन स्वास्थ्य केंद्रों में टीकाकरण, गर्भवती महिलाओं की जांच, परिवार कल्याण, संक्रामक, गैर-संक्रामक रोगों की जांच और उपचार, मानसिक स्वास्थ्य के लिए भी सुविधा मिलेगी। विशेष

रूप से उल्लेखनीय बात यह है कि पहली बार व्यावसायिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य को प्रमुखता दी गई है।

6. हर परिवार को एक स्वास्थ्य कार्ड मिलेगा, ताकि ये सभी सुविधाएं मिल सकें।

7. हर नागरिक को जीवन रक्षक दवाएं मुफ्त मिलेंगी और लेबोरेटरी जांच की सुविधा मिलेगी।

8. आयुर्वेद, यूनानी और होमियोपैथी को भी प्रमुखता दी जाएगी और इस प्रकार की चिकित्सा सेवा गांवों और कच्ची बस्तियों तक उपलब्ध होगी और साथ-साथ योग का भी प्रचार किया जाएगा।

9. गंभीर बीमारी के इलाज के लिए जिला और राज्य स्तर के अस्पताल में पूंजी निवेश करके सुधार किया जाएगा ताकि दुर्घटना और गंभीर रोगों के लिए उचित उपचार सेवाएं उपलब्ध हो सकें।

10. हर भारतीय को स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने के लिए लोगों की जरूरत तो पड़ेगी, इस नीति में एक नए स्वास्थ्य कैडर की व्यवस्था की गई है, जो स्वास्थ्य सेवा के प्रशासन की जिम्मेदारी लेगा। इस प्रकार, डॉक्टर इलाज पर ध्यान देंगे, जबकि सब लोगों तक स्वास्थ्य सेवा पहुंचाने की जिम्मेदारी इन प्रबंधकों के कैडर की होगी।

11. विशेष रूप से गांव और कच्ची बस्ती के स्तर पर अधिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की व्यवस्था की जाएगी। जैसे आशा और मलेरिया वर्कर आदि। विशेष रूप से कुशल आशा वर्कर और नर्स बनने के लिए भी सुविधा है ताकि गांवों की महिलाएं पढ़-लिखकर आगे आएं। नये ग्रामीण डॉक्टरों की भी एक सूची तैयार की जाएगी जो सामान्य बीमारियों, घावों के टांके लगाने या पट्टी बांधने का काम करेंगे।

12. शहरी नागरिकों के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। भारत में एक-तिहाई लोग शहर में रहते हैं। शहर में बड़े अस्पतालों के अलावा रोज़ाना की छोटी-मोटी बीमारियों के लिए कोई सुविधा नहीं है। इसके लिए शहरों में भी प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र बनाए जाएंगे।

13. गंभीर और महंगी बीमारी के लिए नई स्वास्थ्य नीति में बीमा की भी सिफारिश की गई है लेकिन यह विशेष अस्पताल में भर्ती होने पर ही उपलब्ध होगी।

14. हमारे देश के 75 प्रतिशत लोग निजी स्वास्थ्य सेवा प्राप्त करते हैं। कुछ शहरों में सरकारी सेवाएं उपलब्ध नहीं हैं या अच्छी नहीं हैं। जिससे निजी अस्पतालों को स्वास्थ्य सेवा में शामिल किया गया है। लेकिन निजी अस्पतालों में कुछ नियमों और स्तर को मानना पड़ता है। जैसे जरूरी नहीं होने पर भी भर्ती करना, अलग-अलग रोगों के लिए अलग-अलग इलाज के नियम और अलग-अलग रोग के लिए अलग-अलग फीस लेना। ये सभी बातें निजी स्वास्थ्य क्षेत्र के साथ संवाद और बातचीत के बाद ही तय की जा सकती हैं ताकि सब लोगों को शोषण के बिना, कम पैसे में अच्छी सुवधिा मिल सके।

15. सरकार खास तकनीक में अधिक निवेश करेगी, सभी स्वास्थ्य रिकॉर्ड कंप्यूटर में रखे जाएंगे और एक नागरिक और उसके डॉक्टर को सही समय पर रोगी की स्वास्थ्य संबंधी सभी जानकारी मिल सकेगी।

16. सरकार ने स्वीकार किया कि लोगों की भागीदारी के बिना स्वास्थ्य में सुधार नहीं किया जा सकता है। इसके लिए ग्रामीण और शहरी मोहल्लों की स्वास्थ्य समितियों पर जोर दिया गया है। सरकार का मानना है कि अगर ये स्थानीय समिति सक्रिय हो जाएं तो स्वास्थ्य से संबंधित कामकाज घर के आसपास ही हो जाएगा। पंचायतों को भी स्वास्थ्य संबंधी जिम्मेदारियों को निभाना है। 'सेवा' के हमारे अनुभव से पता चलता है कि जब तक स्थानीय लोग स्वयं ही प्राथमिक स्वास्थ्य की जिम्मेदारी नहीं लेंगे, तब तक हमारे स्वास्थ्य में सुधार नहीं हो सकता। और इसमें भी महिलाओं की सहभागिता से देश के स्वास्थ्य की स्थिति अधिक मजबूत होगी।

17. नई स्वास्थ्य नीति में स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया है कि स्वास्थ्य में सुधार केवल चिकित्सकीय सेवाओं से ही नहीं हो सकता। इसलिए नीति की सिफारिश है कि समेकित सेवाएं अनिवार्य हैं।

पोषक आहार, बालसेवा, मल-जल की सुविधा, स्वच्छता अभियान आदि के बारे में नई स्वास्थ्य नीति का कहना है कि स्वास्थ्य मंत्रालय दूसरे मंत्रालयों के साथ समन्वय करके इस तरह कार्य करेगा कि स्वास्थ्य पर सीधे सकारात्मक प्रभाव पड़ें। वर्तमान में शिक्षा के क्षेत्र

की तरह सबके लिए स्वास्थ्य एक अधिकार है, यह कानून अभी लाना नहीं है। यह सरकार का मंतव्य है क्योंकि सरकार मानती है कि पहले स्वास्थ्य स्वास्थ्य सेवा पहुंचे तो सही बाद में धीरे-धीरे अधिकार दिए जाएंगे।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में आम लोगों के लिए अवसर

1. प्राथमिक स्वास्थ्य उपचार लोगों के घर तक पहुंचे, इस तरह से सेवाएं आसानी से, समय पर और कम मूल्य पर मिलेगी।
2. कैंसर, डायाबिटीज, व्यावसायिक रोग, मानसिक स्वास्थ्य और अन्य विकलांगता जैसे गैर-संक्रामक रोगों की शुरूआत में ही जांच की जाएगी ताकि जीवन बचाया जा सके।
3. कुछ आवश्यक दवाएं और रोग निदान की जांच निशुल्क होगी जिससे लोगों की बचत होगी।
4. इस नीति में महिला स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य जैसे विषय को प्रमुख स्थान दिया गया है जिससे वर्षों से उपेक्षित स्वास्थ्य समस्याओं का समाधान होगा।
5. स्थानीय स्वास्थ्य कर्मचारी जैसे नर्स, पुरुष स्वास्थ्य कर्मचारी, आशा और इसके अलावा ग्रामीण चिकित्सकों के नए कैडर के प्रावधान से नागरिकों को रोज़गार के अवसर मिलेंगे और स्वास्थ्य सेवा तक पहुंचने में मदद की मिलेगी।
6. ग्रामसभा और स्थानीय स्वास्थ्य समिति का काम स्वास्थ्य सेवा को लोगों तक पहुंचाने में मदद करने का रहेगा। इसके लिए नागरिक समाज, पंचायत और स्वास्थ्य समिति की क्षमता बढ़ाने के लिए यह एक अवसर है।
7. नागरिक समाज जब स्थानीय लोगों के संगठन बनाएगा और इन संगठनों का स्वास्थ्य समिति में प्रतिनिधित्व होगा, तब स्वास्थ्य सेवा की गुणवत्ता और पारदर्शिता बढ़ जाएगी।
8. गरीब और वंचित लोगों को संगठित करने के लिए सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रम एक मुद्दा हो सकता है।
9. कम लागत और मुफ्त अनिवार्य दवाओं के आउटलेट को समुदाय आधारित संस्थानों को भी सौंपा जा सकता है जिसे एनजीओ जैसी संस्थाएं सहयोग भी कर सकती हैं, जिससे दवाएं लोगों तक अच्छी तरह पहुंच सकेंगी।
10. राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के कार्यान्वयन के लिए अन्य राष्ट्रीय कार्यक्रमों के एकीकरण और समन्वय की आवश्यकता है, जैसे आंगनवाड़ी (आईसीडीएस), जल और स्वच्छता, पोषण, आजीविका, आवास जैसे कार्यक्रम सार्वभौमिक स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए मंच उपलब्ध करा सकते हैं।
11. राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति बुनियादी स्तर से संचालित करने पर जोर देती है, जिससे नागरिक संस्थाओं को सरकार के साथ मिलकर काम करने का एक अवसर मिलता है। इससे युवा पीढ़ी को स्वास्थ्य के बारे में जागरूकता, शिक्षा और कार्य के अवसर मिलेंगे।
12. उच्च स्तरीय उपचार प्राप्त करने के लिए सरकार के स्वास्थ्य प्रबंधक, सुविधाएं और मानक उपचार, मूल्य मार्गदर्शिका फायदेमंद होंगे। इस तरह से स्वास्थ्य सेवा में गुणवत्ता और पारदर्शिता रहेगी।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति को लागू करने के लिए सरकार, नागरिक संगठनों, निजी संस्थाओं और कॉर्पोरेट को मिलकर काम करने की आवश्यकता है। ■

लोगों को संगठित करने और एकत्रित करने में अन्तर

www.thenation.com वेबसाईट पर 7 फरवरी, 2017 को प्रकाशित **'डी.डी. गुट्टनप्लान'** द्वारा लिए गए **'जेन मैकएलेवी'** के साक्षात्कार के अंश 'विचार' के पाठकों के लिए संक्षिप्त रूप में यहा प्रस्तुत किए गये हैं।

'जेन मैकएलेवी', अमेरिकी श्रमिक आंदोलन के सबसे मुखर और विवादास्पद आलोचकों में से एक हैं। 'राइजिंग एक्सपेक्टेशन एंड राइजिंग हेलः माई डेकेड फाइटिंग फॉर द लेबर मूवमैंट' उनकी पहली पुस्तक है। तब से मैकएलेवी ने अपना समय शिक्षण (वे इस समय हार्वर्ड स्कूल ऑफ लॉ में 'लेबर एंड वाइल्ड लाइफ प्रोग्राम' में पोस्ट डॉक्टरेट फैलो के रूप में काम कर रही हैं) और मजदूर संगठनों के सलाहकार के रूप में सेवारत है। यह साक्षात्कार उनकी नई किताब 'नो शॉर्टकट्सः ऑर्गेनाजिंग फॉर पावर इन द न्यू गिल्डेड एज' के संदर्भ में है।

मैकएलेवी का कहना है, 'मैं' संगठित करने' और 'इकट्ठा करने' के बीच अंतर समझने और 'जनमत गणना और सर्वेक्षण' के सामने 'व्यवस्थित परीक्षण' के बीच अंतर समझने की कोशिश कर रहा हूँ। यह अंतर वास्तव में महत्वपूर्ण है। हम संघर्षमय हड़ताल, संघ या मण्डल के चुनाव या समझौते जीतते हैं, इस जीत के पीछे कारण हैं - हमारी निरंतर 'व्यवस्थित परीक्षणों' से गुजरने की श्रृंखला। ये कुछ परीक्षण हमें दो बातें बताते हैंः एक जिसे मैं 'जमीन से पैदा हुआ नेता' कहता हूं - कामकाज के किसी भी स्थल में मजदूरों का सबसे विश्वसनीय भारी बहुमत प्राप्त किया है? क्योंकि ऐसे मजदूर नेताओं की पहचान करना बिल्कुल आसान नहीं है और इसलिए 'वे' हमारे बीच हैं या नहीं यह जानने के लिए 'व्यवस्थित परीक्षण' करने की आवश्यकता होती है। और दूसरा, क्या वे मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सीईओ) को प्रस्तुत की जाने वाली सामूहिक याचिका पर हस्ताक्षर करवाने के लिए सहयोगियों का भारी बहुमत प्राप्त कर सकते हैं? हम हरेक मजदूर को खतरनाक काम करवा कर यह बताना चाहते हैं कि उनकी अपने 'सिद्धांत' के प्रति प्रतिबद्धता है, क्योंकि वे सार्वजनिक रूप से अपना नाम मशहूर करना चाहते हैं कि 'संगठन के इस पल में मैं अपने सहयोगियों के साथ खड़ा हूँ', कुछ परीक्षणों का केंद्रीय विचार यह है किः 'वे अपने मुख्य कार्यकारी अधिकारी के सामने खड़े हुए हैं।' अच्छे संगठनकर्ताओं का कहना है कि, 'जीवन अपने आप में एक व्यवस्थित परीक्षण है।' प्रत्येक नए परीक्षण के साथ आप श्रमिक का संकट बढ़ाते हैं। कुछ कसौटी और परीक्षण तीव्र संकट की स्थिति में नेतृत्व और उसकी वफादारी का मूल्यांकन करते हैं। यह आकलन, फोन पर लेने वाले जनमत के तहत रसोई घर में खड़े-खड़े दी जाने वाली प्रतिक्रियाओं के आधार होने वाले आकलनों से अलग है।

श्रमिकों की जीत के लिए एजेंसी की पुष्टि करते समय, क्या आप यह देखते हैं कि परिभाषित ढांचे के तहत क्या आपके पास विशाल बहुमत है, कार्य स्थलों पर, श्रमिक वर्ग एक दूसरे के खिलाफ करने वाली तमाम श्रृंखलाएं, जैसे काला बनाम गोरा, पुरुष बनाम महिला, यहूदी बनाम गैर-यहूदी आदि की जांच करते हैं। इस देश के श्रमिक संघों को नष्ट करने की लड़ाई में तिरस्कार, विभाजन, नस्लवाद, स्त्रीद्वेष आदि पसंददीदा हथियार रहे हैं। हमारी प्रारंभिक सदस्यता 75 से 80 फीसदी तक नहीं पहुंचती तब तक हम श्रमिक संघ के चुनाव में 51 अर्थात साधारण बहुमत प्राप्त करने की भी नहीं सोच सकते। 'हड़ताल' मतलब सच्चे अर्थ में हड़ताल करने का निर्णय लेने के लिए और उसमें विजय प्राप्त करने के लिए हमें 90 प्रतिशत से अधिक बहुमत प्राप्त करना अनिवार्य होता है। इसलिए हड़ताल पर जाने के लिए तो अपरिहार्य 90 प्रतिशत बहुमत है या नहीं यह पता

करने के लिए हमें निश्चित कसौटी और परीक्षण की शृंखला शुरू करते हैं क्योंकि 'हड़ताल' आखरी सिरे का निश्चित परीक्षण है - और इन परीक्षणों की शृंखला के द्वारा ही हमने जीत हासिल की थी और अमेरिका में - 2016 तक के अद्‌भुत समझौते कर पाए थे। इसी तरह के दबाव के तहत समानांतर चले एक अन्य आंदोलन में केवल दक्षिण में सामाजिक अधिकारों के लिए हुए आंदोलन का उल्लेख किया जा सकता है। 1930, 1940 और 1950 के दशक में ट्रेड यूनियनों को इस तरह के जोखिमों का सामना करना पड़ा था।

संगठित करने और लोगों को इकट्ठा करने के बीच अंतर के मुद्दे पर मैकएलेवी आगे कहती हैं, 'मैंने 'संगठित करने की प्रक्रिया' को और अधिक स्पष्ट करने की कोशिश की है। क्योंकि यह शब्द 'लोकतंत्र जैसा ही आम हो गया है। हर कोई लोकतंत्र बारे में बात करता है, लेकिन वे क्या कहना चाहते हैं उसे स्पष्ट नहीं करते। अधिकांश 'यूनियन' और सामाजिक परिवर्तन के लिए सक्रिय समूह कहते हैं कि वे 'संगठित कर रहे हैं' लेकिन मेरी राय में उसमें मौलिक अंतर यह है कि वास्तविक प्रयासों में श्रमिकों की भूमिका क्या है? क्या श्रमिक अपनी मुक्ति लिए इकट्ठा हुए हैं? क्या वे अपने समुदाय और कार्यस्थल में बदलाव लाने के लिए जरूरी जीत हासिल करने की रणनीति के केंद्र में हैं? या फिर वे एक जटिल पहेली का एक छोटा सा टुकड़ा हैं, जहां श्रमिकों की आवाज और उनकी राय वास्तव में निर्णायक नहीं है। इस देश (संयुक्त राज्य अमेरिका) में जारी अभियानों में पिछले 15 से 20 सालों के दौरान श्रमिकों की आवाज निर्णायक नहीं रही। पिछले 20 वर्षों में शार्टकट का तरीका अपनाया जा रहा है। सभी, इस दृष्टिकोण पर आ गए हैं कि 'संगठन के भीतर हो या बाहर, साधारण श्रमिकों को सक्रिय करने की मेहनत और कठिन काम किए बिना कैसे चल सकता है।' सदस्यों की राय के बारे में बताएं तो - संगठन की अनुभूति के बजाय संदेशों के माध्यम से अभियान चलाकर सदस्यों के वोट प्राप्त कर लेने चाहिए। संगठन का नेतृत्व सोचने लगा है कि जब जरूरत होगी इस तरह से वोट ले लिया जाएगा। संगठन के आंदोलनों में 'मतगणना' ने संगठन प्रक्रिया का स्थान ले लिया है।

अन्य एक है कॉर्पोरेट अभियान - कॉर्पोरेट अभियान की पूरी अवधारणा और पेचीदा रणनीतियों का निर्माण सूचित करता है कि संगठन के अग्रणी नेतृत्व के साथ श्रमिक सक्रिय भागीदार नहीं बनें तो ये किस तरह से कठिन समय में उनके वित्तीय साधनों से 'ब्रांड' यानि बड़ी प्रतिष्ठित प्रतिभा को नुकसान पहुंचा करके आंदोलनों में विजय पा लेंगे। मजदूरों के हित में कार्यस्थल पर बहुमत खड़ा करके विजय प्राप्त करने का मॉडल अब ब्रांड को नुकसान करने में तब्दील हो चुका है और जिसे हम 'चुनाव प्रक्रिया समझौता' या 'कार्ड चेक' और 'तटस्थता के सौदे' कहते हैं उसे कराने के लिए कर्मचारियों से वित्तीय क्षतिपूर्ति प्राप्त कर ली जाती है। हालांकि यह विचार बुरा नहीं है, लेकिन अंत में उन्होंने अब श्रमिकों के साथ बात करना बंद कर दिया है।

इसका कारण यह है कि आपने मजदूरों को 'ट्‌वीटर' और फेसबुक पर जोड़ दिया हैं और 'मेलचिम्प' सर्वेक्षण कर लिया है, तो आप यह भी कह सकते हैं कि हमने हमारे सदस्यों के विचार जान लिए हैं और 60 प्रतिशत या 80 प्रतिशत हमारे साथ हैं। फिर भी, ऐसा करने वाले कभी नहीं कहते कि केवल पाँच व्यक्तियों ने ही सर्वेक्षण में भाग लिया था। श्रमिक संघों में सदस्यों की संख्या या उसके पदों के लिए श्रमिकों से संपर्क करने को आंदोलन नहीं कहा जाता, लेकिन जो असंगठित श्रमिक हैं उनके दिल और दिमाग को वास्तव में सक्रिय करना एक सच्चा आंदोलन है, जो हममें से कुछ लोग अभी भी कर रहे हैं। ऐसे संगठन के लिए श्रमिक केंद्र स्थान में होने चाहिए। जिसका आधार बहुमत की रणनीति है। इस बहुमत का अर्थ है कि उसमें अधिकांश श्रमिकों को खुद सक्रिय होना चाहिए और 'निश्चित परीक्षण' उसकी जांच करते हैं। कॉर्पोरेट आंदोलनों और शिखर से तलहटी के दृष्टिकोण से चलने वाले आंदोलनों में श्रमिक सबसे आखिर में रहता है। उसका मात्र 'प्रतीक कार्यकर्ता' के रूप में उपयोग किया जाता है। आंदोलन के चेहरे के रूप में उसका प्रयोग किया जाता है। उन्हें स्वयं के नियोक्ताओं के खिलाफ गवाही देने के लिए अधिकारियों के सामने खड़ा तो कर दिया जाता है, लेकिन वे रणनीति के केंद्र स्थान में नहीं होते। यह बुनियादी अंतर है। जबकि संगठन के मॉडल में परिवर्तनकारी संस्था आम आदमी के हाथों में रहती है।

क्या यह व्यावसायिक कर्मचारियों के साथ की जाने वाली धोखाधड़ी है? यह मामूली चतुराई है कि फिर 'मजदूरों के साथ धोखाधड़ी' है? इसका अर्थ यह नहीं है कि मेरे द्वारा चलाए हुए किसी भी आंदोलन में हमने राजनेताओं या समुदायों को नहीं बुलाया या कोई अन्य प्रकार का फायदा नहीं लिया। हमने भी यह सब किया है, लेकिन संगठन के मॉडल के भीतर श्रमिक केंद्र में रहा है। हम देखते हैं कि आंदोलन और लड़ाई जीतने के लिए एक अतिरिक्त हथियार के रूप में मजदूरों के समुदाय के साथ अपने स्वयं के राजनीतिक नेता, एक विश्वसनीय नेता या वे पूरे समुदाय को एकत्र करते हैं। हम इस दूसरे हथियार को कंपनी के उस दिन के शेयर मार्केट को धराशाई करने के लिए पर्याप्त

नहीं मानते, हालांकि देश में कई आंदोलन इस दूसरे हथियार से ही लड़ाई लड़ते हैं। जब मैं कहता हूँ कि सीट बेल्ट बांधने को अनिवार्य करने या बच्चों के लिए नुकसानदेह खाद्य पदार्थ पर प्रतिबंध लागू करने जैसे मुद्दों पर वकालत करना अच्छी बात है और इसे वकालत से करना संभव है। ऐसे मामलों में कानूनी केस दायर करना हो तो सामान्य लोगों को जोड़ना बिल्कुल संभव नहीं है। लोगों को इकट्ठा करने की एक अलग भूमिका है और संगठित करने की अलग। बल्कि मेरिट की भी अलग भूमिका है। जब हमारे देश में शरणार्थी आते हैं तब उन्हें पहले साल रहने के लिए कोई जगह उपलब्ध कराता है, युद्ध क्षेत्र में से आने वाले बच्चों को कुछ लोग कपड़े देते हैं - यह खैरात का सीधा रूप है। लेकिन इससे बदलाव नहीं लाया जा सकता। वकालत की एक विशिष्ट भूमिका है, जैसे कोई बांध का निर्माण हो रहा हो और हमें उसे रोकना है, तो वहाँ और कोई रास्ता नहीं होने से लोग अदालत में मामला दर्ज कर देते हैं। दरअसल, लोगों को इकट्ठा करने की भी अलग भूमिका है। मैंने अपनी पुस्तक में तर्क दिया है कि यह बड़ी कठिन लड़ाई है, जैसे अमेरिकी राष्ट्रपति का चुनाव जीतना, संयुक्त राज्य अमेरिका की राज्यसभा का अधिग्रहण करना, वैश्विक पूंजीवाद को नियंत्रित करना, आदि जैसी लड़ाइयों के लिए वकालत या लोगों को इकट्ठा करने पर भरोसा नहीं कर सकते। क्योंकि वे आम जनता के एकमात्र और सबसे महत्वपूर्ण 'जनसंख्या' नामक हथियार के सामने झुक जाते हैं।

विरोध करते समय लोग विचार करते हैं कि 'हमारी संख्या काफी अधिक है', 'मैं स्थान हासिल कर लूंगा?', 'इतनी संख्या में क्या विशाल नहीं है'?... आदि। हम सब को ऐसा लगता है ... लेकिन कितने लोग होते हैं? क्या हम ताकत का मूल्यांकन कर सकते हैं? जो स्पष्ट रूप से बताए कि वॉल स्ट्रीट पर उल्लेखनीय रूप से कब्जा करने के लिए कितनी संख्या की जरूरत है? यह महत्वपूर्ण और पर्याप्त नहीं है कि रैली में हम कितने लोगों को इकट्ठा कर पाएंगे। रैली में हम किसे लाते हैं, उन्हें कौन लाता है, हम उस रैली को कहाँ तक रख सकते हैं वह महत्वपूर्ण है। क्या फिर मुट्ठी भर वे लोग महत्वपूर्ण नहीं? जो बुद्धिमान और मजेदार हैं, और हम उन्हें हर रैली में पाते हैं। वही के वही लोग... वॉल स्ट्रीट की सीढ़ियों पर हर समय रैली में मौजूद रहते हैं? 'संगठन' आधारशिला का विस्तार करता है। हमारे देश में, हमारे साथ खड़े रहने वाले लोगों का आधार बढ़ाना जरूरी है परंतु 1970 से हमने यह काम स्थगित कर दिया है।

आंदोलनकर्ता और नेता के बीच के अंतर के बारे में मैकवेल का कहना है कि, लोगों को इकट्ठा करना आंदोलनकर्ता का दृष्टिकोण रहता है। आंदोलनकर्ता वे लोग होते हैं जो आंदोलन के पूर्णकालिक पेशेवर कार्यकर्ता होते हैं या फिर पूर्णकालिक कार्यकर्ता नहीं होते - इनमें से एक होते हैं लेकिन वे हमेशा हमारे साथ होते हैं। वे वॉल स्ट्रीट की समस्याओं के साथ पूरी तरह से सहमत हैं, वे मानते हैं कि जलवायु परिवर्तन एक समस्या है, उनका मानना है कि नस्लवाद एक समस्या है। वे 'ब्लैक लाइव्स मैटर' के लिए खड़े होते हैं। समस्या यह है कि इस तरह के लोगों की संख्या अब अधिक नहीं रही, क्योंकि पिछले 45 साल से हम अपने आधार को बिखरने दे रहे हैं। इसके साथ ही प्रगतिशील आंदोलन स्थानीय स्तर की संगठन प्रक्रिया में से 'आंदोलन केंद्रित' और 'कर्मचारी केंद्रित' लोगों को इकट्ठा करने के मॉडल में तब्दील हो गया है। किसी भी क्षेत्र को लें - शहर, राज्य या कोई अन्य, सामाजिक संरचना की स्थिति का विश्लेषण करने के लिए हमारा दृष्टिकोण व्यवस्थित है। मैं श्रमिक बाजारों में सामाजिक संरचना का विश्लेषण करने के संदर्भ में अधिकतर सोचता रहता हूँ, उसके लिए संघीय संगठन काफी शक्तिशाली और दिलचस्प रहता है क्योंकि राजधानी जिस तरह से दुनिया को देखती है उस तरह से इन द्वबाजारों से मैं सामाजिक विश्व को देखता हूं। जैसे श्रमिक बाजारों की शृंखला हैं... सिर्फ शहर की शृंखला नहीं हैं।

सत्ता-संरचना का विश्लेषण करते समय, मैं जिस तरह से विचार करता हूं उसमें एक अंतर यह है कि, हम जिस पर नियंत्रण प्राप्त कर सकते हैं या जिसके लिए लड़ सकते हैं वे पूंजीपति और कर्मचारी वर्ग एक निश्चित क्षेत्र में एक दूसरे के साथ किस तरह से जुड़े हुए हैं उनका विश्लेषण करना चाहिए और मैं उस निश्चित क्षेत्र को एक श्रमिक बाजार के रूप में देखता हूं। जबकि पारंपरिक संगठन आंदोलनों में वे कॉर्पोरेट अभियान का विश्लेषण करते हैं तब वे कर्मचारियों के सामाजिक ढांचे की स्थिति पर ध्यान नहीं देते। वे सिर्फ आपूर्ति, बुनियादी आपूर्ति, राशन आपूर्तिकर्ता, आपूर्ति श्रृंखला, पेंशन फंड, निवेश कोष और आपातकालीन निधि आदि का विश्लेषण करते हैं। यहां मुद्दा यह है कि, 'हम समुदाय को समझने के लिए भी सामाजिक संरचना का विश्लेषण नहीं करते - मेरा तर्क तो यह है कि, वे सांप्रदायिक रूप से जुड़े हैं, और वे क्षेत्रीय बाजारों में जिस तरह टिके हुए हैं उसे ध्यान में रखते हुए सामाजिक संरचना विश्लेषण करें तो हम मालिकों का श्रम बाजार पर से नियंत्रण तोड़ सकते हैं। हमारे साथी श्रमिक कौन हैं? ये कार्यकर्ता किस समुदाय से जुड़े हुए हैं, वे आस्था के तहत देवालय या अन्य किसी स्थान पर जाते हैं, आदि। मैं जिस तरह से सत्ता-संरचना के बारे में सोचता हूँ उसमें सामान्य संबंधों

को मापने से हजारों श्रमिक समुदाय की बाह्य सीमाओं में से विस्तार करने लगेंगे और एक तरह से संगठन के प्रति प्रेम और अपने समुदाय के लिए उनकी भूमिका की भावना उजागर होने लगेगी। यह महत्वपूर्ण चुनाव के समय संगठन के घरेलू मतों में बदलती दिखाई देगी।

सी. राइट मिल्स ने हमें अवधारणा दी है कि प्राथमिक विद्यालय में जिस तरह से सिखाया गया था उस तरह से वास्तव में लोकतंत्र काम नहीं करता है। मिल्स ने खुले तौर पर कहा कि क्या आप खेल समझते हैं? सशस्त्र बलों, राजनीतिक नेताओं और औद्योगिक घरानों के बीच सत्ता संरचना जकड़ी हुई है जो हमारे 'हर व्यक्ति के वोट मिलकर बनने वाले लोकतंत्र के आसान विचार को संकीर्ण बनाती है। सबसे पहले मैं मिल्स को बधाई देता हूं क्योंकि मिल्स ने हमें सूत्र, साधन दिए जिनसे हम हमारे नेता जिस तरह राज करते हैं उनका विश्लेषण कर सकते हैं, लेकिन हमने क्या किया? हम वास्तव में, हमारे सत्ता-संरचना का गहराई से विश्लेषण करके आम जनता की ताकत का मापन करके, उनका आलेखन करके, उनका विकास कर सकते हैं ताकि नेताओं के खिलाफ खड़े होने के लिए उन्हें बल मिल सके।

जोसेफ लुडेर की पुस्तक (द सिविल राइट मूवमेंट एंड लॉजिक ऑफ सोशल चेंज) के बारे में मैकएलेवी बताती हैं कि, 'लुडेर ने सामाजिक आंदोलन ने कैसे विजय प्राप्त की, उसके पूरे इतिहास का पुनर्लेखन किया है। विजयी आंदोलनों के मामलों की एक पूरी श्रृंखला उन्होंने प्रस्तुत की है। जैसा मैंने पहले कहा वे पूंजीवाद के संकट बन गए, वे दक्षिण के प्रमुख बाजारों में मालिकों के सामने संकट खड़ा कर सके थे।' वे राजनीतिक सत्ता परिवर्तन के लिए मालिकों को हथियार बना सके। क्योंकि वास्तविक वे आर्थिक संकट दे सके थे।' (उदाहरण के लिए, मोंटगोमरी में बस उपयोग का विरोध)

भ्रष्टाचार और दिखावे के इस युग हमें संगठित होना हो तो महत्वपूर्ण सीख यह है कि यदि आप पूंजी के क्षेत्र में संकट पैदा नहीं कर सकते हो तो आप विजय भी नहीं पा सकते हैं क्योंकि हमारी जनसंख्या में भी काफी वृद्धि हुई है और राजनीति क्षेत्र में अत्यधिक खर्च किया जा रहा है। सिटीज़न यूनाइटेड और मैक कर्शन ने खर्च की हद पार कर दी है। अब संगठन के किसी भी निर्णायक चुनाव में और सामाजिक परिवर्तन के आंदोलन में अमेरिकी डॉलर के सामने डॉलर खर्च करके प्रतियोगिता जीतना असंभव है। अर्थात सामाजिक न्याय के आंदोलनों में यदि आप अपने मालिक के लिए, प्रत्येक कार्य स्थान, आर्थिक क्षेत्र के हरेक क्षेत्र में अगर आपात स्थितियां पैदा नहीं कर सकें तो हमें नहीं लगता है कि अब हम जीत पाएंगे।

दक्षिण में राजनीतिक स्थापितों को सामाजिक न्याय के आंदोलन हरा नहीं सके क्योंकि काले लोग वोट नहीं दे सके। मुद्दा यही है। यदि दक्षिण में वे औद्योगिक घरानों और व्यापार के लिए संकट खड़ा कर सके होते, तो अपना व्यवसाय बचाने के लिए वे कहते कि कृपया रुको! इसका कारण यह है कि आर्थिक नुकसान उठाना भारी होता है। और तब हम जीते होते। नए 'गिल्डेड युग' में अर्थात भ्रामक समृद्धि के तथाकथित युग में हमारे पास जीतने के लिए यही रास्ता शेष है। जिन कार्यस्थलों पर श्रमिकों व मालिकों के साथ सीधा संबंध कम होता हो उन स्थानों पर संगठन बनाने चाहिए, 'मेक द रोड' में उस पर ही जोर दिया गया है - और मैं इस विचार पर कुछ समय के लिए टिके रहने के लिए कहता हूँ। वे भौगोलिक स्तर पर अपनी शक्ति बढ़ा रहे हैं जो बहुत ही चालाक विचार है। वास्तव में, वे अपनी सदस्यता के आधार का विस्तार कर रहे हैं और अपने प्रत्येक अभियान में इसे मुख्य बल बनाते हैं। हालांकि, मेरा एक सवाल है, जो महत्वपूर्ण है, यदि ट्रेड यूनियन को खत्म कर दिया जाए तो क्या हमारे देश में 'मेक द रोड' (ये आंदोलन बहुत कम हैं उसके बावजूद) टिके रह सकते हैं? मुझे लगता है कि वे टिके नहीं रह सकते। वे न्यूयॉर्क में इसलिए टिके रह सके क्योंकि न्यूयॉर्क में प्रवासी मजदूरों से संबंधित वेतन-भत्ता चोरी जैसे अनेक महत्वपूर्ण मुद्दों पर हमने भारी कानूनी लड़ाई जीती थी। और वे इसलिए जीते कि संगठनों ने केवल हस्ताक्षर नहीं किए बल्कि संगठन शामिल हुए। संसद में केंद्रीय भूमिका निभाई और शहरों में सीटें भी जीतीं और यह जीत 'मेक द रोड' की जीत हो गई क्योंकि वे इस बारे में भी होशियार थे कि ट्रेड यूनियनों से कैसे निपटना है।

संक्षेप में, हमे तुरंत प्रवासी मजदूरों को केंद्र में रखकर गंभीरता से लोगों को इकट्ठा करना शुरू कर देना चाहिए। इसके साथ ही तत्काल देश की मौजूदा ट्रेड यूनियनों को केंद्र में रखकर भी लोगों को इकट्ठा करना चाहिए। लेकिन संयुक्त राज्य अमेरिका में सबसे उत्तेजक काम तो स्थानीय, प्रांतीय और राज्य स्तर हो रहे हैं, राष्ट्रीय स्तर पर नहीं। हमारे यहां स्थानीय, प्रांतीय और राज्य स्तर पर अभी भी ऐसे ट्रेड यूनियन हैं जो सभी बाधाओं के बावजूद जीत हासिल कर रहे हैं। मेरे लिए आशा की एक ही बात है कि लोग अभी भी संगठन बना रहे हैं और हम अभी भी जीत रहे हैं।

(स्रोतः www.thenation.com/article/labor-movement-must-learn) ■

सुनने की क्रिया - 'एक परिप्रेक्ष्य'

यह आलेख **लिन्ये मेन्योजो**, मीडिया एवं कम्युनिकेशन स्कूल, आर.एम.आइ.टी. विश्वविद्यालय, मेलबोर्न, ऑस्ट्रेलिया - शिक्षा-शास्त्र में 'सुनने की क्रिया' के बारे में लिखे गये आलेख से लिया गया हैं। (स्रोतः डेवलपमैंट इन प्रैक्टिस, अंक 26, नंबर 7, अक्टूबर 2016)

हम जिनके साथ काम करते हैं, उन पर विश्वास दिखाने वाली क्रिया का नाम सुनना है। पाउलो फ्रेइरे ने अपनी पुस्तक 'एन इनक्रेडिबल कन्वरसेशन' (1996) में लिखा है 'सहिष्णुता का व्यवहार करने से ही मुझे अलग-अलग लोगों के साथ काम करने और उनके साथ मिलकर सीखने की समृद्ध संभावना के बारे में समझ बनाने के मौका मिला। सहिष्णु होने का अर्थ सरल रहना बिल्कुल नहीं है। इसके विपरीत, सहनशील रहना व्यक्ति का कर्तव्य हैः नैतिक कर्तव्य है, ऐतिहासिक कर्तव्य है, राजनीतिक कर्तव्य है। लेकिन, सहनशीलता मुझसे यह उम्मीद नहीं रखती कि मैं अपना व्यक्तित्व खो दूं। 'फ्रेइरे के विश्लेषण में सुनने की क्रिया के तीन रूप उभरते हैंः 1) ध्यान से सुनना, 2) खुद की आवाज सुनना और 3) बोलने के रूप में सुनना।

हम अक्सर प्रत्यक्ष को नजर अंदाज करते हैं और रुढ़िवादी बातों को सुनते रहते हैं। लिन्ये ग्रामीण कहानियों का हवाला देती हैं - हमारे बड़े-बुजुर्ग पशु-पक्षियों की कहानियाँ सुनाते हैं, धोखेबाज खरगोश हमेशा चालाकी का उपयोग करके मुसीबत से बच निकलता है जबकि अधिक चालाक लोमड़ी को खरगोश जितनी बड़ी धोखाधड़ी नहीं करने पर भी सजा मिलती है। आश्चर्य की बात यह है कि हम सब ये कहानियां शांति से सुनते हैं। इसका कारण यह है कि अगर हम उन कहानियों को शांति से नहीं सुनेंगे, तो हमें कहानियां ही नहीं मिलेंगी। सुनने का मतलब यह नहीं है कि जब कोई व्यक्ति बोल रहा हो तब शांति बनाए रखना है। अन्य व्यक्तियों के साथ संचार में जुड़ना एक सचेत निर्णय है। फ्रेइरे के शब्दों में - "अलग-अलग लोगों के साथ काम करने और उन लोगों के साथ मिलकर सीखने की समृद्ध संभावनाएं खोजनी चाहिए।" ध्यान से सुनने का कौशल हमें बिल्कुल अलग विचारों, अलग-अलग दृष्टिकोण के प्रति सहिष्णु बनाता है। सुनने की क्रिया हमारे द्वारा स्वीकृत इस तथ्य का सम्मान है कि अन्य व्यक्ति समान रूप से बुद्धिमान है और वह बातचीत व बहस में सक्षम है। इस तरह की बातें हमारे विचारों और तर्कों में सुधार करने का अवसर प्रदान करती हैं। इससे हमारे तर्क और वैचारिक प्रक्रियाओं को संयोजित करने में हमें मदद मिलती है। दूसरों को सुनने का मतलब यह है कि हम अपने आप को बौद्धिक जांच के लिए दूसरों के सामने प्रस्तुत करते हैं ताकि यह पता लग सके कि हमारा ज्ञान परीक्षा पर कितना खरा उतर सकता है। शिक्षकों का छात्रों पर अपने विचार को थोपने के बजाय संवाद पर आधारित संबंधों को विकसित करने चाहिए।

पाउलो फ्रेइरे ने 'लैटर्स टू क्रिस्टिना - रिफ्लेक्शन ऑन माई लाइफ एंड वर्क' (1996) में लिखा है कि जब वे लिखते हैं तब सबसे पहले उन्होंने जो लिखा था उस बात को इस बात के साथ जोड़ते हैं। यही बात बोलने पर भी लागू होती है। अपने आप को ध्यान से सुनने की क्रिया से हमें जो मुद्दा रखना होता है, हम उस मुद्दे के संदर्भ के साथ लगातार बने रहते हैं। जब हम बोलते हैं, तब हम वास्तव में किसी मुद्दे पर अपना रवैया स्पष्ट करते हैं और एक बहस तैयार करते हैं। खुद को सुनने की क्रिया से हमें - यदि हमारे विचारों में समस्या हो तो - पहला आलोचक बनने का अवसर मिलता है। गुस्टावो गुटिएरेज ने 'ए थियोलोजी ऑफ लिबरेशनः हिस्ट्री, पॉलिटिक्स एंड सॉल्वेशन' (1971) में उल्लेख किया है कि ध्यान से सुनने की क्रिया वंचित और पीड़ितों की ओर से कार्यवाही करने और उनके लिए बोलने के रूप में व्यक्त होती है।

इस प्रकार, सुनना गंभीरता पूर्वक होने वाली क्रिया है, मानवता के प्रति हमारी आस्था का सम्मान है, लोकतंत्र, समानता और सामाजिक न्याय के विचारों के प्रति हमारे आदर की जीत है। इससे हम समाज के विद्यार्थी बन सकते हैं और सुनने की क्रिया के शिक्षा-शास्त्र के प्रतिभागी बन सकते हैं। सुनने की क्रिया से सैद्धांतिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है, जो किसी भी अन्य गतिविधि के माध्यम से नहीं मिल सकता। ■

अधिकार प्राप्ति की मंत्रणा के लिए सामाजिक समझौता जातिगत ढांचे के अंतर्गत बदलते पहलूओ

- उन्नति के कार्यकर्ताओं की चर्चा के अंश

जाति की सामाजिक संरचना, व्यवस्था, संस्कृति, अर्थ व्यवस्था सहित बदल रही विविध लाक्षणिकताओं के साथ विभिन्न प्रकार से जुड़ाव है। इन बदलती लाक्षणिकताओं के लिए मुख्य रूप से शहरीकरण, औद्योगीकरण, सुधार आंदोलन, अधिकार आधारित कार्य व्यवस्था और लोकतांत्रिक प्रक्रिया जिम्मेदार है। इसलिए, जाति समाज शास्त्रीय शोध का मुख्य विषय है। डंकन ग्रास अपनी पुस्तक 'फ्राम पॉवर्टी टू पावरः हाऊ एक्टिव सिटीजन्स एंड इफेक्टिव स्टेट्स कैन चेन्ज द वर्ल्ड' (गरीबी से सत्ता तकः सक्रिय नागरिक और प्रभावी राज्य कैसे दुनिया बदल सकते हैं) में यह स्पष्ट किया है कि अधिकारों की प्राप्ति सशक्तिकरण के लिए बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अधिकारों के कारण ही लोग शासन तंत्र के समक्ष अपनी बात को प्रस्तुत करने में सक्षम हो पाते हैं। जब प्रभावी राष्ट्र वंचित लोगों को ये अधिकार प्रदान करने की गारंटी देता है, तब नागरिकों और राष्ट्र के बीच एक नए सामाजिक समझौते का सृजन होता है। जातिगत लक्षण एक सक्रिय नागरिक की पहचान के साथ मिल जाता हैं। प्रमुख जाति, संस्कृति, जाति कार्य व्यवस्था आदि की परिभाषाओं के माध्यम से जाति की बदलती लाक्षणिकताएं स्पष्ट रूप से दिखायी गयी हैं। लोकतांत्रिक देश में राज्य और नागरिक के बीच का सामाजिक समझौता यजमानी प्रथा और जाति आधारित असमानता के अन्य रूपों को मान्यता नहीं देता।

यहां लोकतंत्रीकरण, जाति आधारित राजनैतिक प्रतिनिधित्व, धर्म सुधार आंदोलनों के साथ जुड़ाव और अधिकार आधारित कार्य व्यवस्था के संदर्भ में जाति के अनुक्रम को, विशेष रूप से निचले स्तर में जाति की बदलती लाक्षणिकताओं का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। अतीत में 'निचली जाति' के समुदायों को सार्वजनिक कार्यक्रमों में उनके अधिकार और लाभ प्राप्त करने से वंचित रखा गया था। बहुजन समाज पार्टी द्वारा सुश्री मायावती के नेतृत्व में कार्य व्यवस्था के मामलों की जांच करके इन जाति के समुदायों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व का विश्लेषण हाथ में लिया गया है। अधिकारों की प्रस्तुति के लिए तीन धार्मिक आंदोलनों - राधास्वामी, डेरा सच्चा सौदा और स्वाध्याय पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। इसके साथ ही पंचायती राज के तहत चुनाव सहित विभिन्न सरकारी लाभ आधारित कार्यक्रमों के तहत कार्य व्यवस्था में गरीब वर्ग को शामिल करने के प्रयास पर भी ध्यान दिया गया है। लेखक ने भारतीय जाति व्यवस्था की बदलती लाक्षणिकताओं को किसी शैक्षणिक अध्ययन के माध्यम से नहीं बल्कि सामाजिक प्रक्रिया के पर्यवेक्षक के रूप में प्रस्तुत किया है।

राजनीतिक प्रतिनिधित्व के माध्यम से जातिगत ढांचे में परिवर्तन

बहुजन समाज पार्टी ने मायावती के प्रतिनिधित्व के द्वारा 'बहनजी' की नई पहचान स्थापित करके सामाजिक अनुक्रम की सभी मान्यताओं को चुनौती दी है। मायावती की पोशाक और शिष्टाचार भारतीय राजनीति में तथाकथित उच्च जाति की महिलाओं की तुलना में कई मायनों में अलग है। ये महिलाएं साड़ी में सजी भारतीय महिला का पारंपरिक चित्र प्रस्तुत करती हैं। उनमें से कुछ महिलाओं को छोड़कर, अधिकांश महिलाएं समाज के बुजुर्गों की मर्यादा रखने के लिए साड़ी का पल्लू सिर पर रखती हैं और अच्छे से तथा विनम्रता से बातचीत करती हैं। इस परंपरा के विपरीत मायावती कभी भी साड़ी नहीं पहनती हैं। वे सलवार-कुर्ता पहनती हैं और गर्दन में दुपट्टा लपेटती हैं। सार्वजनिक स्मारकों पर अंधाधुंध खर्च करके मायावती भारतीय नागरिक समाज और न्याय प्रणाली का गुस्सा झेल चुकी हैं। इसके बजाय पर वे स्कूलों, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों, सरकारी योजनाओं, सड़कों आदि को दलित नेताओं के नाम देकर बुद्धिजीवियों के रोष से बच सकती थी। लेकिन मायावती दलित समुदाय और उसके महानुभावों के नाम पत्थर में अंकित करने का प्रयास कर रही हैं, उस तरफ ध्यान देने में उनके आलोचक मात खा गए। अपने पद और प्रतिष्ठा का उपयोग करके मायावती ने भारत की मुख्य धारा की सांस्कृतिक राजनीति में दलित राजनीतिक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित कर दिया है। 3

अक्टूबर, 2010 के टाइम्स ऑफ इंडिया में प्रकाशित एक लेख में स्वामीनाथन एस. अंकलेसरिया अय्यर ने लिखा है कि मायावती के शासन के दौरान छुआछूत की प्रथा में उल्लेखनीय बदलाव आया था। ऊंची जातियों के विवाह में दलितों के लिए अलग बैठक व्यवस्था का अनुपात पूर्वी उत्तर प्रदेश में 77.3 प्रतिशत से घटकर 8.9 प्रतिशत हो गया है और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में 73.1 प्रतिशत से घटकर 17.9 प्रतिशत हो गया है। गैर-दलित समुदायों द्वारा दलित घरों में भोजन और पानी स्वीकारने का प्रतिशत पूर्वी भाग में 1.7 प्रतिशत से बढ़कर 72.5 प्रतिशत हो गया है और पश्चिमी भाग में 3.6 प्रतिशत से बढ़कर 47.8 प्रतिशत हो गया है। बंधुआ मजदूरी की कुप्रथा का अनुपात 32.1 प्रतिशत से घटकर 1.1 प्रतिशत जितना नगण्य हो गया है। दलितों द्वारा की जाने वाली भागीदारी वाली खेती पूर्व में 16.7 प्रतिशत से बढ़कर 31.4 प्रतिशत, जबकि पश्चिम में 4.9 से बढ़कर 11.4 प्रतिशत हो गई है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में दलितों द्वारा मृत पशुओं को उठाने का कामकाज 72.6 प्रतिशत से घटकर 5.3 प्रतिशत हो गया है। चिनाई, दर्जी या ड्राइवर जैसे गैर-पारंपरिक व्यवसायों में काम करने वाले दलित परिवारों का अनुपात राज्य के पूर्वी भाग में 14 प्रतिशत से बढ़कर 37 प्रतिशत, जबकि पश्चिमी भाग में 9.3 बढ़कर 32.1 प्रतिशत तक पहुंच गया था। इसके अलावा, दलित व्यवसायी परिवारों का अनुपात पूर्व में 4.2 प्रतिशत से बढ़कर 11 प्रतिशत और पश्चिम में 6 प्रतिशत से बढ़कर 36.7 प्रतिशत हो गया है।

प्रसूति करवाने और बच्चे को स्कूल में प्रवेश देने में होने वाले भेदभाव में भी परिवर्तन देखा गया। 90 के दशक में दलित महिलाओं को एएनएम जैसे सरकारी स्वास्थ्य सेवकों की संस्थागत प्रसूति सेवाओं का लाभ नहीं मिलता था। पूर्वी उत्तर प्रदेश में स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं की उपस्थिति 1.1 प्रतिशत से बढ़कर 89.9 प्रतिशत हो गई है। पहले गैर-दलित सरकारी दाई शायद ही दलित घरों में प्रसूति करवाने के लिए जाती थी। यह अनुपात पूर्व में 3.4 प्रतिशत से बढ़कर 53.4 प्रतिशत हो गया है और पश्चिम में शून्य से बढ़कर 3.6 प्रतिशत हुआ है, जो अभी भी बहुत कम है। शाला में प्रवेश का अनुपात पूर्व में 28.8 प्रतिशत से बढ़कर 63.4 प्रतिशत और पश्चिम में 21.7 प्रतिशत से बढ़कर 65.7 प्रतिशत हो गया है। पूर्व में स्कूली शिक्षा प्राप्त करने वाली लड़कियों का अनुपात 10 प्रतिशत से बढ़कर 58.7 प्रतिशत हुआ है, और पश्चिम में 6.8 प्रतिशत से बढ़कर 56.9 प्रतिशत हुआ है। सामाजिक प्रतिनिधित्व के रूप में, दलित ऊंची जातियों की उपभोक्ता पद्धतियां अपना रहे हैं। दलित समुदाय में टूथपेस्ट, शैंपू और बोतल में मिलने वाले तेल (बालों के लिए) की खपत बढ़ी है। इससे पहले उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में केवल एक तिहाई और पश्चिमी भाग में लगभग नगण्य दलित विवाह में कार या जीप का उपयोग करते थे, जबकि आज लगभग सभी दलित इन वाहनों का प्रयोग करने लगे हैं। बारातियों को लड्डू परोसने का जो अनुपात पूर्व में 33.6 प्रतिशत और पश्चिम में 2.7 प्रतिशत था, वह दोनों भागों में लगभग 100 प्रतिशत हो गया है। (पूर्वी जिलों में गाजीपुर, मिर्जापुर, जौनपुर, आजमगढ़, वाराणसी और पश्चिमी जिलों में अलीगढ़, बिजनौर, मुजफ्फरनगर, मेरठ शामिल हैं)

ईपीडब्ल्यू के डी. श्यामबाबू, लेन्ट प्रिटचेट, चंद्रभान प्रसाद, देवेश कपूर द्वारा लिखित लेख - 'असमानता पर पुनर्विचारः बाजार के सुधारवादी युग में उत्तर प्रदेश के दलित' (28 अगस्त, 2010) के अनुसार 1990 के बाद से दलितों के जीवन स्तर में सुधार हुआ है। यह युग मायावती की प्रगति का भी सूचक है और इस विकास में मायावती ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस अध्ययन के अनुसार, दलितों की जीवन शैली, आहार, उपभोग और धार्मिक कार्यों की विधि में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। जो ऊपरी (सामाजिक) दर्जे की उपभोक्ता शैलियों को अपनाकर एक उच्च (सामाजिक) दर्जा प्राप्त करने का सूचक है। दलित अब गन्ने के रस और रोटी जैसे कम खर्च वाले भोजन के स्थान पर साबुत चावल, ताजा सब्जियों और मसालों का इस्तेमाल करने लगे हैं। इन जिलों में होने वाले विवाहों में अब दलितों के लिए अलग बैठने की व्यवस्था का अनुपात लगभग नगण्य हो गया है, अन्य जाति के लोग अब दलितों से मृत मवेशियों को उठाने की अपेक्षा नहीं रखते, गैर-दलित दाइयों द्वारा दलित घरों में प्रसूति करवाने में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है और गैर-दलितों द्वारा दलितों के घरों में आतिथ्य स्वीकर करने में वृद्धि हुई है। गांव और गांव से बाहर आर्थिक जीवन के तरीकों में भी बहुत परिवर्तन हुआ है। रोजगार के लिए सुदूर शहरों की ओर पलायन में वृद्धि हुई है। दलित भी अब दर्जी, चिनाई, ड्राइवर के रूप में काम करते हैं, पान या किराने की दुकान चलाते हैं या व्यवसाय करते हैं। कृषि संबंधों में परिवर्तन आया है। अब हलवाहे जैसी बंधुआ आर्थिक भागीदारी में

लगभग कोई भी दलित शामिल नहीं होते। कई दलित अब ऊंची जातियों की कृषि भूमि पर खेत मजदूर के रूप में काम करते हैं। राजनीतिक प्रतिनिधित्व और प्रतिनिधि लोकतंत्र के मद्देनजर जाति के अनुक्रम में काफी परिवर्तन हुआ है।

नए धार्मिक संप्रदायों द्वारा शुरू किए सामाजिक सुधारों के कारण जाति व्यवस्था में परिवर्तन

राधास्वामी एक धार्मिक आंदोलन है और देश के विभिन्न भागों में इसके अनुयायी हैं। इसके तहत निम्न जाति समूहों को मांसाहारी भोजन छोड़ने, शराब और नशीली दवाओं का सेवन नहीं करने, उच्च नैतिक जीवन जीने और शब्द योग साधना करने के निर्देश दिये जाते है। स्वर्गीय दादाजी (पांडुरंग शास्त्री) के नेतृत्व में शुरू किए गए अन्य एक आंदोलन स्वाध्याय में 'कर्म' और 'भक्ति' को नई पहचान देकर पारंपरिक जाति समूहों की प्रवृत्ति के आधार पर तत्वज्ञान को बढ़ावा दिया जा रहा है। दादाजी ने मानव अस्तित्व के सभी पांच पहलुओं - सामाजिक, संवेदनात्मक, आर्थिक, राजनीतिक और आध्यात्मिक पहलुओं की क्रांति का विचार प्रस्तुत किया था। इसे जीवन के अन्य सभी पहलुओं में परिवर्तन लाने के लिए मूक क्रांति माना गया था। स्वाध्याय परिवार के अनुयायियों में मछुआरों और किसानों से लेकर नेता और उद्योगपति शामिल हैं। दादाजी (अठावले) की 70वीं वर्षगांठ समारोह में हिस्सा लेने के लिए चौपाटी समुद्र तट पर पांच लाख से अधिक स्वाध्यायी इकट्ठा हुए थे। विभिन्न जातियों के अमीर और गरीब लोग मिलकर पूर्ण भावना और उत्साह के साथ इस उत्सव में शामिल हुए थे। धार्मिक विविधताओं पर आधारित जाति व्यवस्था मानव गौरव के एक आंदोलन में परिवर्तित हुई थी। योगेश्वर कृषि (भूमि के भागों पर स्वाध्यायी द्वारा संयुक्त रूप से खेती की जाती है), मत्स्यगंधा (मछुआरों द्वारा पकड़ी गई कुछ मछलियों को सार्वजनिक संपत्ति जुटाने के लिए बेचा जाता है), वृक्ष मंदिर योजना, अमृतालय (बिना मूर्ति वाले मंदिर, जहां गांव के लोग हर रोज शाम को जातिगत भेदभाव के बिना इकट्ठा होते हैं) जैसे अभिनव प्रयोगों द्वारा स्वाध्याय परिवार समानता पैदा करता है। स्वाध्याय परिवार के सिद्धांतों का पालन करने के बाद, अधिकांश गांवों के समुदायों और ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति में बहुत सुधार हुआ है।

डेरा सच्चा सौदा जातिगत भेदभाव से उपजा है। बड़ी संख्या में डेरों के उद्भव के पीछे लगातार हो रहा सामाजिक बहिष्कार और सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था में व्याप्त असमानताएं जिम्मेदार हैं। सिख धर्म में जातिगत भेदभाव का विरोध किया गया है और मानव श्रम की प्रशंसा के बावजूद ये दोष दूर नहीं हुए हैं। प्रत्येक जाति के लोग डेरों के अनुयायियों में शामिल होने के बावजूद, इन डेरों के ज्यादातर अनुयायी दलित और पिछड़े लोग हैं और वे ज्यादातर आर्थिक रूप से पिछड़े भी होते हैं। वे डेरों के समतावादी उपदेशों के कारण ही डेरों के अनुयायी बनने के लिए प्रेरित होते हैं। ये डेरे अपने धर्मोपदेश में सामाजिक विरोध के सादा-सरल लेकिन सटीक मुद्दों को प्रस्तुत करते हैं।

इनमें से कई डेरों ने अपने स्कूलों और स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना की है। वे निम्न जाति के गरीब बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं और उन्हें आर्थिक मदद भी करते हैं, जिससे वे गौरवपूर्ण जीवन जी सकें और अपने समुदाय के गौरवपूर्ण जीवन में सहायक हो सकें। डेरा सच्च खंड (रविदास डेरा) पंजाब के सबसे लोकप्रिय डेरों में से एक है। दलितों में जागरूकता फैलाने में इस डेरे ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पंजाब में दलितों में चेतना जगाने के लिए 1920 के अद-धर्म आंदोलन और रविदास डेरा ने बहुत योगदान दिया है। अद-धर्म आंदोलन ने निम्न जाति के लोगों को अनूठी धार्मिक पहचान प्रदान की है।

आर्थिक स्थिति में सुधार आने और सामाजिक जागरूकता फैलने से दलित अपने लिए उपयुक्त सामाजिक दर्जे की मांग करने लगे हैं। शायद इसी कारण से वे सामाजिक समानता और गरिमा प्रदान करने वाले वैकल्पिक धार्मिक पंथों में शामिल होने के लिए प्रेरित हुए हैं। इस प्रक्रिया में, उन्होंने वर्चस्व वाली जातियों को चुनौती भी दी है। दलितों द्वारा विभिन्न डेरों में शामिल होने के पीछे सामाजिक बहिष्कार के साथ भूमि स्वामित्व का अभाव और राजनीतिक वंचितता जैसे कारण भी जिम्मेदार हैं। हालांकि, बढ़ते दलित प्रतिनिधित्व, सकारात्मक कामकाज के लाभों और अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में सृजित विविधता की वजह से समानता की भावना मजबूत हुई है। इससे स्थानीय और राष्ट्रीय सत्ता के ढांचे में अपने हिस्से का प्रतिनिधित्व करने की प्रेरणा मिली है। बेशक, इसके लिए वर्चस्व वाली जातियों के प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है। इस कारण से देश में ऊंची जातियों और

दलितों के बीच उग्र स्थिति की सूचक विभाजक रेखा बनी है।

अधिकार आधारित जुटाव और लोकतांत्रिक माध्यम से जाति का नागरिकता में रूपांतरण

महात्मा गांधी नरेगा, सूचना का अधिकार, एफआरए, आरटीई, खाद्य सुरक्षा, प्रवास की समस्या आदि अन्य क्षेत्रों के इर्द-गिर्द जुटाव में हुई वृद्धि के कारण जाति पर आधारित संबंध नागरिकता की नई तटस्थ अवधारणा में परिवर्तित हुए हैं। महात्मा गांधी नरेगा सामाजिक ऑडिट में श्रमिक (जो ज्यादातर जातिगत हिसाब से निम्न जाति के होते हैं) अपने मुद्दों को प्रस्तुत करते हैं, यह बात स्पष्ट दर्शाती है कि एक नया सामाजिक समझौता प्रस्तुत हो रहा है। इससे पहले, सरकार को 'माईबाप' के रूप में देखा जाता था, जिसका स्थान आज 'राज्य नागरिकता' ने ले लिया है, जिसमें राज्य कर्तव्य पूरा करने वाले नागरिक अधिकार-धारक की भूमिका निभा रहे हैं। लोकतंत्र के कामकाज से उभरते अधिकार-दायित्व का यह प्रत्यक्ष परिणाम है। दक्षिण अफ्रीका और ब्राजील भी इस तरह के बदलाव के गवाह रहे हैं।

पिछले बीस वर्षों में पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव में आरक्षण के प्रावधान के माध्यम से इस प्रक्रिया को अधिक मजबूत किया गया है। दलित जातियों और अन्य पिछड़ी जातियों को स्थानीय राजनीति के क्षेत्र में एक नये लोकतंत्र का स्थान मिला है, जहां उन्होंने पारंपरिक 'उच्च जातियों' के प्रभुत्व को चुनौती दी है। स्थानीय प्रशासन के चुनाव में औपचारिक नेतृत्व की स्थिति के परिणामस्वरूप गांव स्तर पर जाति समीकरणों को बदल दिया है। अधिकार के आधार पर काम सौंपने के कारण विशेष रूप से निचली जातियों को सकारात्मक आत्म-अभिव्यक्ति का अवसर मिला है। हाल के वर्षों में सामाजिक समानता के लिए काम सौंपने की विकसित करने और जाति आधारित भेदभाव के खिलाफ संघर्ष करने के लिए अम्बेडकर दलित सिद्धांत के आंदोलनकारी (मार्टिन मेकवान) और गांधीवादी विचारधारा के अनुयायी (नारायणभाई देसाई) का मेल होना दिलचस्प रहा था।

जाति आधारित समाज में अधिकारों की उपलब्धता

भारतीय जाति व्यवस्था में हुए परिवर्तन हमेशा संस्कृति, शहरीकरण, औद्योगीकरण सुधार आंदोलनों और लोकतंत्रीकरण जैसे बाह्य कारकों द्वारा प्रेरित रहे हैं। परिवर्तन का विरोध भीतर से ही, खासतौर पर 'ऊंची जाति' के द्वारा किया जाता है और इसके लिए 'सांस्कृतिक विसंवादिता' का बेहूदा तर्क आगे रख दिया जाता है। उच्च जातियों का यह विरोध प्रतिरोध कई बार जातिगत मानदंडों को बदलने की हिम्मत करने वाले व्यक्ति के परिवार को दी जाने वाली सजा के रूप में परिलक्षित होता है। यह ऐसी प्रक्रिया भी है जिसके द्वारा उच्च जातियां अपनी ताकत और स्थिति को मजबूत करती हैं।

जाति के कथित मानदंडों या नियमों को नहीं मानने वाले व्यक्ति को 'ऑनर किलिंग' का शिकार होना पड़ता है। ज्यादातर महिलाएं और लड़कियां ऑनर किलिंग की शिकार होती हैं। हत्या की इन घटनाओं के पीछे मुख्य कारण पहनावा, शिक्षा, अंतर्जातीय विवाह, परिवार की मर्जी के खिलाफ शादी आदि होते हैं। राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार, भारत में 72 प्रतिशत ऑनर किलिंग की घटनाएं अंतर्जातीय विवाह का परिणाम होती हैं। इस प्रकार की घटनाएं सामाजिक नियंत्रण का स्वरूप और भय का वातावरण पैदा करने की तकनीकों का एक रूप होता है और इनका उद्देश्य लोगों को (डराकर) सामाजिक नियमों को तोड़ने से रोकना है। इसके अलावा, इस तरह समाज महिलाओं की लैंगिकता, महिला के अपने शरीर पर उसकी स्वायत्तता और संतान पैदा करने के उसके अधिकार पर नियंत्रण पाना चाहता है। गरिमा को महिलाओं की लैंगिकता और सुयोग्य (जाति व्यवस्था के अनुसार) संतानों को जन्म देने की क्षमता के परिप्रेक्ष्य में देखा जाता है।

जातिगत नियमों को तोड़ने के लिए व्यक्ति को और समुदाय के व्यवहार के पारंपरिक मानकों को तोड़ने के लिए निम्न जाति को दंडित करने का अधिकार 'खाप पंचायत' के नाम से विख्यात ऊंची जातियों की पंचायतों को दी गई है। मुख्य नियम यह है कि खाप के सभी लड़कों और लड़कियों को भाई बहन माना जाता है। खाप पंचायत आसपास के कई गांवों में रह रहे एक ही गोत्र के परिवारों द्वारा बनाई खाप का संचालन करती हैं। खाप पंचायतें मुख्य रूप से हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और राजस्थान के कुछ भागों में प्रचलित हैं। खाप पंचायतों के अधिकार क्षेत्रों में प्रेम विवाह प्रतिबंधित माना जाता है। खाप में रहने वालों को एक ही गोत्र में या उसी गांव में किसी भी गोत्र में विवाह की अनुमति नहीं है। खाप के नियमों का

उल्लंघन करते हुए विवाह करने वाले कई युवा दंपतियों ने मौत को गले लगा लिया है। विवाहों में 'अंतर्जातीय विवाह' और 'गोत्र बाह्य विवाह' का नियम प्रचलित है। कोई भी निचली जाति ऊंची जाति जैसा सामाजिक व्यवहार करे या आचरण करने का साहस करे, तो उसे दंडित किया जाता है, शारीरिक दंड दिया जाता है और उसका सामाजिक बहिष्कार किया जाता है। यह देखा गया है कि कुछ स्कूलों में ऊंची जाति की पंचायत निम्न जाति के बच्चों को उसी मटके में पानी नहीं पीने देती।

खाप पंचायत सामाजिक बहिष्कार और दंड के आदेश देती है। ज्यादातर मामलों में या तो व्यक्ति की हत्या कर दी जाती है या पीड़ित को आत्महत्या करने के लिए मजबूर किया जाता है। इस प्रकार की सभी कार्यवाहियां भाईचारे और महिमा के नाम पर की जाती हैं। इस स्थिति के लिए लोकतांत्रिक रूप से चुनी पंचायती राज संस्थाओं की कमजोरी और खाप पंचायतों की शक्तिशाली उपस्थिति जिम्मेदार है। खाप पंचायतों की सत्ता को नियंत्रित करने के लिए सरकार ने आज तक कोई ठोस कदम नहीं उठाया है। हरियाणा के कई गांवों में खाप फैसलों के तहत अक्सर युवा लड़कियों को भयभीत किया जाता है, उनका उत्पीड़न किया जाता है और उनकी हत्या तक कर दी जाती है। किशोरों को जहर पिलाकर किसी भी पुलिस रिकॉर्ड के बिना उसके शरीर को जला देना, परिवारों के लिए आम बात है। भाईचारे और बंधुत्व की सारी जिम्मेदारी लड़की पर डाल दी जाती है। महिला को ही गांव के गौरव का रक्षक माना जाता है। लड़कों को कई बार नियमों में कुछ छूट दे दी जाती है, लेकिन लड़कियों को कभी भी नियम को तोड़ने की अनुमति नहीं दी जाती। अगर कोई लड़का-लड़की भाग जाए, तो परिवारों के सिर पर सामाजिक बहिष्कार और लाखों रुपयों के जुर्माने का संकट आ जाता है। इतना ही नहीं, उस परिवार की अन्य महिलाओं को भी उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है।

अंत में, जाति के ढांचे और व्यवहार में परिवर्तन करने के लिए जाति में ही विरोध होता है। शुद्ध मानी जाने वाली आदतों के संस्कृतिकरण की प्रवृत्तियों से सामाजिक और धार्मिक सुधार आंदोलनों के तहत जातिगत ढांचे में परिवर्तन हुआ है। हालांकि, यह स्थिति केवल आत्म-व्याख्या देती है। यदि निम्न जाति के लोग समानता की मांग करने के लिए आवाज उठाएं या संवैधानिक प्रक्रिया के माध्यम से शक्तिशाली दर्जा प्राप्त कर लें तो 'आत्म-व्याख्या' 'आत्म-अभिव्यक्ति' को सशक्त करने में बदल जाती है। यह जातिगत ढांचे में वास्तविक परिवर्तन लाली है।

वर्तमान में भारत में निम्न जातियों को जाति के कठोर ढांचे से मुक्त करने के लिए कई सहायक प्रक्रियाएं मौजूद हैं। 'अपना जाति गौरव' रखने वाली उच्च जातियां संकीर्ण विचारधारा के साथ अपने ही घेरे में कैद हो गई हैं। जातियों की अलग-अलग तरीकों से काम करने की जिम्मेदारी होती है। निम्न जातियों ने अपने प्रभाव क्षेत्र का विस्तार किया है और ये जातियां अपनी सामाजिक और राजनीतिक स्थिति बदल रही हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से बहिष्कृत जाति समूहों को सामाजिक काम सौंपने से नई सामाजिक पूंजी का निर्माण होता है, जो सार्वजनिक कार्यक्रमों और योजनाओं में अधिकारों की उपलब्धता सुनिश्चित करते हैं। राजनीतिक प्रक्रिया, सामाजिक सुधार आंदोलन या ग्राम सभा, सामाजिक ऑडिट जैसे सार्वजनिक मंच में भागीदारी करके और स्कूल प्रबंधन समिति, ग्रामीण स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं पोषण समिति, रोगी कल्याण समिति, सामाजिक न्याय समिति, पानी समितियों आदि जैसी विभिन्न सार्वजनिक कार्यक्रमों के तहत बनी समितियों में सक्रिय भागीदारी के माध्यम से उनके लिए व्यावहारिक एवं उपयोगी कार्य व्यवस्था तैयार की जा सकती है। ■

गतिविधियाँ

सामाजिक क्षेत्र की योजनाओं को स्थानीय स्तर तक पहुंच के लिए नीति आयोग द्वारा गैर सरकारी संगठनों के सहयोग का आह्वान

वामपंथी विचारधारा के साथ जुड़े गैर सरकारी संगठनों (एनजीओ) पर पिछले ढाई साल से पैनी नजर रखने के बाद नरेंद्र मोदी सरकार ने यू-टर्न लिया है। सरकार ने सामाजिक क्षेत्र की योजनाओं को बेहतर तरीके से पहुंचाने के लिए नागरिक समाज संगठनों का सहयोग लेने का कदम आगे बढ़ाया है। एक तरफ नीति आयोग ने एनजीओ को सामाजिक क्षेत्र की योजनाओं को पहुंचाने के लिए हिस्सा बनने को कहा है, वहीं दूसरी ओर, सूत्रों का कहना है कि इस कार्रवाई का उद्देश्य विदेशी स्रोतों से धन प्राप्त नहीं करने वाले एनजीओ को प्रोत्साहित करना और इन एनजीओ को स्थानीय स्तर पर केंद्रीय योजनाओं के कार्यान्वयन में सहायक बनाना है।

नीति आयोग के उपाध्यक्ष, अरविंद पनगड़िया ने नागरिक समाज संगठनों (सीएसओ) के साथ विचार-विमर्श किया था उन्होंने देश में जिला और तहसील स्तर तक सेवाएं पहुंचाने के लिए सरकार का सहयोग करने के लिए कहा था। थिंक टैंक पैनल ने 17 से अधिक प्रमुख गैर सरकारी संगठनों के साथ सतत विचार-विमर्श किया था। इसमें 15 केंद्रीय मंत्रालयों के वरिष्ठ अधिकारी भी उपस्थित थे। एक उच्च अधिकारी के अनुसार, ''शिक्षा, स्वास्थ्य, अशक्त बुजुर्गों की देखभाल, महिलाओं का सशक्तिकरण, ग्रामीण विकास से लेकर हस्त शिल्प कौशल जैसे विभिन्न सामाजिक क्षेत्रों में काम करने वाले स्वैच्छिक संगठनों ने महिला व बाल कल्याण मंत्रालय, भारतीय खाद्य एवं सुरक्षा मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई), अल्पसंख्यक मामलों के मंत्रालय के उच्च अधिकारियों के साथ विचार-विमर्श किया।"

हाल ही में, गृह मंत्रालय द्वारा विभिन्न कारणों के आधार पर 11,000 से अधिक स्वैच्छिक संगठनों का एफसीआरए पंजीकरण रद्द करने की कड़ी कार्रवाई करने के बाद, मोदी सरकार के रवैये में अचानक बदलाव आया है। इस कार्रवाई का एक कारण यह भी था कि ये संगठन देश के विभिन्न हिस्सों में सरकार विरोधी गतिविधियों में शामिल थे। हालांकि, नीति आयोग ने यह राय व्यक्त की है कि राज्य सरकारें, केन्द्र सरकार द्वारा सामाजिक क्षेत्र के लिए जारी विभिन्न योजनाओं को लागू करने के लिए पर्याप्त कदम नहीं उठाती हैं। यह कदम कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी द्वारा केंद्रीय योजनाओं के निष्पादन तक जो खुली पहुंच प्रदान की थी, उसका विरोधाभासी लगता है।

हालांकि, इस अधिकारी ने कहा कि नीति आयोग को अब सरकार की नीतियों और योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन में सीएसओ की भूमिका के महत्व का एहसास हुआ है। थिंक टैंक पैनल को आशा है कि सामाजिक क्षेत्र में केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं के कार्यान्वयन में दूर-दराज के क्षेत्रों में इन योजनाओं और सेवाओं को पहुंचाने में सीएसओ मदद कर सकते हैं। इस अधिकारी ने आगे बताया कि, ''भारत संयुक्त राष्ट्र द्वारा अपनाए सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) को पूरा करने के लिए प्रतिबद्ध है, तब सामाजिक क्षेत्र की योजनाओं के अधिक प्रभावी क्रियान्वयन करने के लिए यह आवश्यक है और सीएसओ को शामिल करके इन लक्ष्यों को हासिल किया जा सकता है।" इस चर्चा के दौरान पनगड़िया ने सीएसओ प्रतिनिधियों को बताया कि सरकार और नागरिक समाज संगठनों के बीच प्रभावी भागीदारी, विशेष रूप से सामाजिक स्तर पर सरकारी संसाधनों के कुशल उपयोग के क्षेत्र में एक लंबा सफर तय करेगी।

इस अधिकारी ने यह भी कहा कि ''इस बैठक में महत्वपूर्ण केन्द्रीय योजनाओं की सेवाओं को पहुंचाने के कामकाज को बेहतर करने के लिए राष्ट्रीय, राज्य, जिला और तहसील स्तर पर सीएसओ और सरकार के बीच प्रभावी भागीदारी को मजबूत करने के उपाय निर्धारित किये गये थे। सीएसओ सेवाएं पहुंचाने के क्षेत्र में धन आवंटन से लेकर मूल्यांकन प्रक्रियाओं सहित अनेक मामलों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

इस बैठक में प्रथम, हैल्पेज इंडिया, सुलभ इंटरनेशनल, प्रदान, अक्षय पात्र और प्रयास सहित अनेक नागरिक समाज संगठनों में भाग लिया था। (स्रोतः इंडियन एक्सप्रेस, 2 मार्च, 2017, नई दिल्ली) ■

वर्ष 2017-18 के लिए निम्न योजनाओं के लिए आवंटित धनराशि (करोड रु. में)

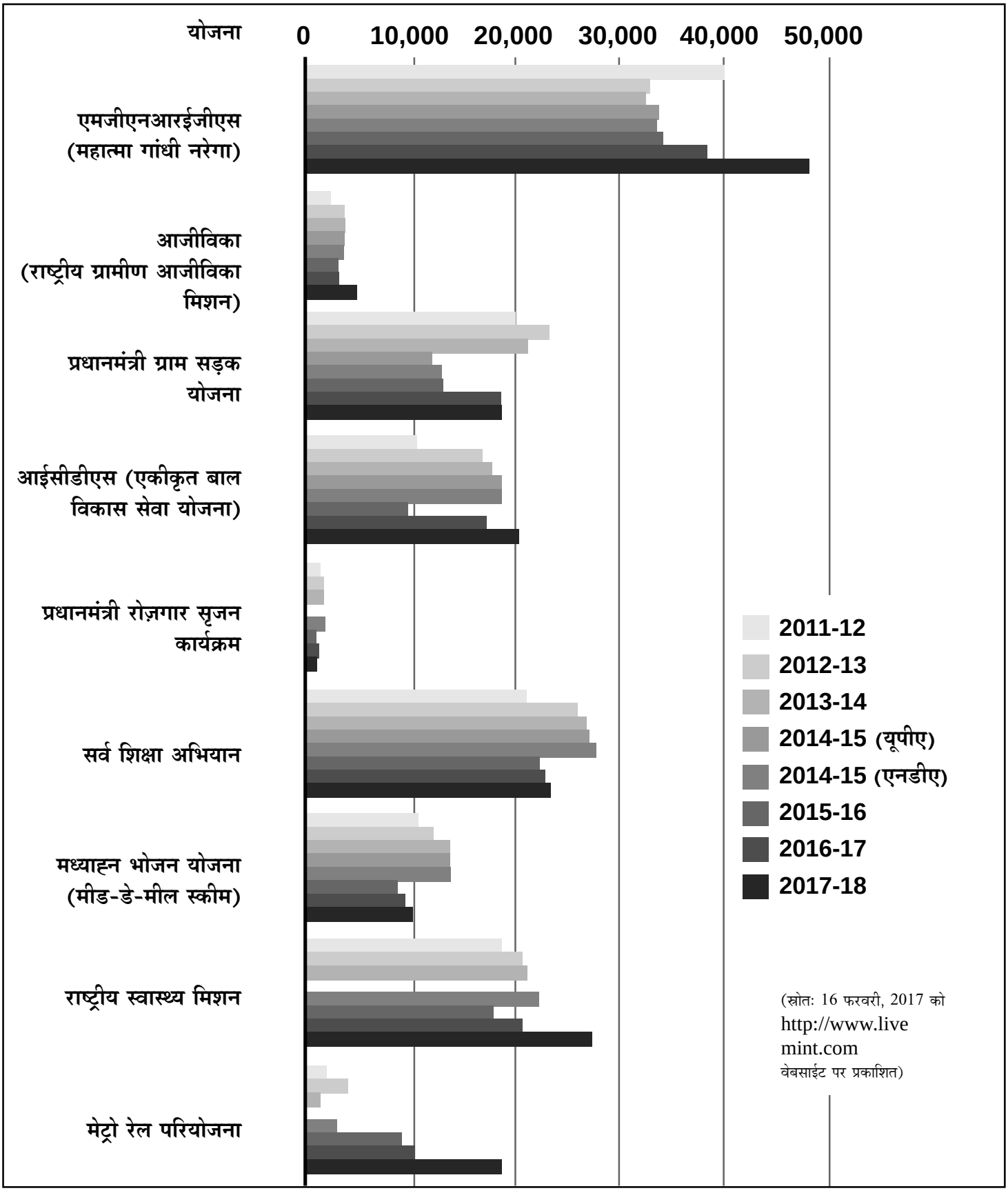

(स्रोत: 16 फरवरी, 2017 को http://www.livemint.com वेबसाईट पर प्रकाशित)

उन्नति

उन्नति

विकास शिक्षण संगठन

जी-1, 200, आज़ाद सोसायटी, अहमदाबाद-380015

फोनः 079-26746145, 26733296 फैक्सः 079-26743752 email: sie@unnati.org वेबसाइटः www.unnati.org

राजस्थान क्षेत्रीय कार्यालय

650, राधाकृष्णन पुरम, लहरिया रिसोर्ट के पास, चौपासनी-पाल बाई पास लिंक रोड, जोधपुर-342014, राजस्थान

फोनः 0291-3204618 email: jodhpur_unnati@unnati.org

इस बुलेटिन के लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं।

दीपा सोनपाल, अरविंद अग्रवाल, रमेश पटेल : ईमेलः sie@unnati.org, publication@unnati.org

अनुवादः आर. के. गुप्ता

मुद्रकः बंसीधर ऑफसेट, अहमदाबाद

केवल सीमित वितरण के लिए

आप लोक शिक्षण व प्रशिक्षण के लिए विचार में प्रकाशित सामग्री का सहर्ष उपयोग कर सकते हैं। कृपया सौजन्य का उल्लेख करना न भूलें और साथ ही अपने उपयोग से हमें अवगत करवायें ताकि हम भी उससे कुछ सीख सकें।